Published by
K. Mittra
at The Indian Press, Ltd.,
Allahabad

Printed by
A Bose,
at The Indian Press, Ltd ,
Benares-Branch.

उपक्रमणिका

धर्म ही मनुष्य-जीवन का मूल है; धर्म ही के द्वारा मानव जीवन की विद्या, सभ्यता और कला कौशल का विकाश तथा धर्मपरिवर्तन द्वारा ही संसार का परिवर्तन एवं धर्मविप्लव द्वारा ही संसार का विनाश होता आया है. विशेष कर भारतवर्ष के साथ तो धर्म का ऐसा घनिष्ठ संबंध है कि यहाँ की कोई बात भी धर्मातिरिक्त नहीं है। वैदिक समय से लेकर अब तक कितने ही धर्मविषयक परिवर्तन इस देश मे हुए, और इसी धर्म-परिवर्तन इतिवृत्ति को ही धर्मग्रंथों से संग्रह करके वर्तमान समय मे ऐतिहासिकों ने अनेकानेक इतिहासतत्त्वों का अनुसंधान किया है। वैदिक समय से पौराणिक और फिर जैन तथा बौद्ध और उसके पीछे फिर शांकर तथा वैष्णव परिवर्तन के इतिहास संस्कृत ग्रंथों मे मिलते हैं, परंतु वर्तमान समय के धर्माचार तथा ऐतिहासिक तत्त्वों का आधार मुसलमानी आक्रमण के पीछे, संस्कृत की चर्चा कम हो जाने के कारण, विशेष कर हिंदी ही के धर्मग्रंथो पर निर्भर है। इनमें प्रधान ग्रंथ नाभा जी कृत "भक्तमाल" है। इसने ऐतिहासिकों को कितनी सहायता दी है यह इतिहासरसिक सज्जन मात्र जानते हैं। इस

ग्रंथ का इतना बड़ा आदर हुआ कि महाराष्ट्री, बँगला आदि देश भाषाओं के अतिरिक्त इसका अनुवाद संस्कृत मे भी हो गया और टीकाओं का तो कहना ही क्या है, कई एक टीकाएँ बन गईं।

"भक्तमाल" के अतिरिक्त भाषा मे और भी कई एक ग्रंथ इस विषय के सहायक हैं, जिन पर अभी तक लोगों की विशेष दृष्टि नहीं पड़ी है; उन्हीं मे से एक ग्रंथ यह "भक्तनामावली" है। इसे सुप्रसिद्ध गोस्वामि हित हरिवंश जी के शिष्य ध्रुवदास जी ने बनाया था। इसके बनने का समय विक्रमीय सोलहवीं शताब्दी का अंत और सत्रहवीं शताब्दी का आरंभ है। इन ग्रंथों के समय आदि पर आगे चलकर यथास्थान विचार होगा, इसलिये यहाँ पर विशेष नहीं लिखा जाता। इन ग्रंथों मे यदि ग्रंथकर्ताओं ने वर्णित महात्माओं का जन्म आदि का समय भी दे दिया होता तो ये विशेष उपकारी हो जाते, परंतु ऐसा न करने पर भी यह तो निश्चय ही है कि इसमें वर्णित महात्मागण संवत् १६८० ८० के पहिले के हैं। इसके अतिरिक्त यदि विशेष ध्यानपूर्वक देखा जाय तो वर्तमान क्रिया तथा भूत क्रिया के प्रयोग से बहुतेरे लोगों का समय कुछ कुछ निर्णय भी हो जाता है, तथा बहुतेरे राजाओं और बादशाहों के नामों से भी बहुत कुछ समय का निर्णय होता है।

यद्यपि "भक्तनामावली" मे बहुतेरे ऐसे महात्माओं के चरित्र वर्णित हैं जिनका वर्णन पुराणों तथा "भक्तमाल" आदि

ग्रंथों मे हुआ है, तथापि बहुतेरे ऐसे भी हैं जिनका वर्णन कहीं नहीं मिलता, तथा च ऐसे भी बहुत से महात्मा हैं जिनसे श्री वृंदावन मे निवास के कारण ध्रुवदास जी का विशेष परिचय था, इसलिये भी यह ग्रंथ विशेष आदरणीय है। इसके अतिरिक्त ओड़छेवाले व्यासजी की वाणी, श्री हरिदास स्वामी के शिष्य भगवतरसिक जी लिखित "भक्तनामावली", मलूकदास जी रचित "ज्ञानबोध" तथा कृष्णगढ़ के राजा नागरीदास जी रचित "पदप्रसंगमाला" ग्रंथो में भी बहुत से महात्माओं का नाम मुझे मिला, जिनकी एक एक सूची इस उपक्रमणिका के अंत मे लगा दी गई है। आशा है कि यह इतिहास-तत्वानुसंधानकारियों की विशेष सहायकारिणी होगी।

"चौरासी वैष्णवों की वार्त्ता" तथा "दो सौ बावन वैष्णवो की वार्त्ता" भी इस विषय में विशेष सहायक हैं, परंतु ये दोनों ही ग्रंथ छप गए हैं तथा बहुत प्रसिद्ध हैं, अतएव इनका विशेष वर्णन नहीं किया गया।

इस ग्रंथ की टिप्पणी लिखने में मुझे निम्नलिखित ग्रंथों से बहुत कुछ सहायता मिली है, अतएव उनके कर्त्ताओं को हृदय से धन्यवाद देता हूँ

(१) नाभा जी कृत "भक्तमाल" (खेद का विषय है कि मुझे कोई शुद्ध प्रति इसकी नहीं मिली इससे नामों का पता लगाने मे बहुत कुछ कठिनता पड़ी)।

भक्तों के नामों का सूचीपत्र

व्यास जी की वाणी से

१ स्वामी हरिदास
२ हित हरिवंश
३ रूप
४ सनातन
५ कृष्णदास
६ मीराबाई
७ जयमल
८ परमानंददास
९ सूरदास
१० नामदेव
११ सेन
१२ धना
१३ रैदास
१४ कबीर
१५ पीपा
१६ गंगलभट्ट
१७ मेहा
१८ आसधीर (आसू)
१९ रामानंद
२० सुरसुरानंद
२१ तिलोचन
२२ खेम
२३ रघू
२४ रघुनंद
२५ कृष्णदास
२६ हरिदास

भगवतरसिकजी लिखित भक्तनामावली से

१ कामदेव
२ रति

३ गणेश जी
४ ब्रह्मा
५ शिव
६ नारायण
७ वाल्मीकि
८ नारद
९ अगस्त्य
१० शुकदेव
११ वेदव्यास
१२ सूत
१३ सेवरी
१४ स्वपच
१५ वशिष्ठ
१६ विदुर
१७ विदुर की स्त्री
१८ गोपी
१९ गोप
२० द्रौपदी
२१ कुंती
२२ पांडव
२३ ऊधव
२४ विष्णुस्वामी
२५ निंबार्क
२६ माध्वाचार्य
२७ रामानुज
२८ लालाचारज
२९ धनुर्दास
३० कूरेस
३१ ज्ञानदेव
३२ तिलोचन
३३ जयदेव
३४ चिंतामणि
३५ बिल्वमंगल
३६ केशव भट्ट
३७ श्री भट्ट
३८ नारायण भट्ट
३९ गदाधर भट्ट
४० गोसाईं विट्ठलनाथ
४१ वल्लभाचार्य
४२ गूजर जाट
४३ नित्यानंद
४४ अद्वैत
४५ कृष्णचैतन्य
४६ गोपाल भट्ट

४७ रघुनाथ गोशाईं
४८ मधु गोशाईं
४९ रूप गोशाईं
५० सनातन गोशाईं
५१ व्यास जी
५२ गोशाईं हरिवंश
५३ हरिदास स्वामी
५४ विट्ठल विपुल
५५ विहारिनिदास
५६ नागरीदास
५७ नवलदास
५८ माधुरीदास
५९ वल्लभ (रसिक)
६० तानसेन
६१ अकबर
६२ करमैती
६३ मीराबाई
६४ करमाबाई
६५ रत्नावती
६६ मीर
६७ माधो
६८ रसखान
६९ अग्रदास
७० नाभा जी
७१ सूरदास मदनमोहन
७२ नरसी
७३ माधोदास
७४ गोशाईं तुलसीदास
७५ कृष्णदास
७६ परमानंददास
७७ विष्णुपुरी
७८ श्रीधर
७९ मधुसूदन
८० पीपा
८१ गुरु रामानंद
८२ अलि भगवान
८३ मुरारि रसिक
८४ श्यामानंद
८५ राँका
८६ बाँका
८७ मुरारीदास
८८ श्रीधर
८९ निष्किंचन
९० सम्हन (?)

९१ लाखा

९२ अंगद

९३ गोविंदस्वामी

९४ नंददास

९५ प्रवोधानंद

९६ मुरारीदास

९७ प्रेमनिधि

९८ विठ्ठलदास

९९ मथुरिया

१०० जोवा

१०१ लालमती

१०२ सीता

१०३ प्रभुता

१०४ झाली

१०५ गोपाली वाई

१०६ पृथ्वीराज

१०७ खेमाल

१०८ चतुर्भुजदास

१०९ राम रसिक

११० आसकरन

१११ मधुकरशाह

११२ जैमल

११३ राजा हरिदास

११४ सैन

११५ धना

११६ कवीर

११७ नामदेव

११८ कूवा

११९ सदन कसाई

१२० वारमुखी

१२१ रैदास

१२२ चित्रकेतु

१२३ प्रह्लाद

१२४ विभीषन

१२५ वलि

१२६ जामवंत

१२७ हनुमान

१२८ गिद्ध जटायू

१२९ गुह

मलूकदास जी के "ज्ञानबोध" ग्रंथ से

१ शंकर
२ नारद
३ शुकदेव
४ सनक
५ सनंदन
६ शेष
७ अंबरीष
८ वलि
९ वेदव्यास
१० पांडव
११ द्रौपदी
१२ ध्रुव
१३ प्रह्लाद
१४ विदुर
१५ भीष्म
१६ हनुमान
१७ अक्रूर
१८ सुदामा
१९ सेवरी
२० मोरध्वज
२१ तिमिरध्वज
२२ ऊधव
२३ रैदास
२४ कबीर
२५ नामदेव
२६ माधोदास
२७ धना
२८ पीपा
२९ सेन
३० मीराबाई
३१ धर्म (?)
३२ खातम मियाँ (?)
३३ नानक
३४ सूरदास
३५ परमानंद स्वामी
३६ रामानंद
३७ जयदेव
३८ तिलोचन
३९ दादू
४० चत्रभुज दास
४१ प्रेमदास
४२ रामदास

४३ मुरारीदास
४४ कामांदास
४५ दरियानंद
४६ राँका
४७ वाँका
४८ कूवा
४९ सकरदं
५० कान्हा
५१ सदन
५२ देवल
५३ केवल
५४ परसा
५५ सोसू
५६ मुद्रक (?)
५७ जंगी ज्ञानी (?)
५८ नरसी
५९ मिर्जा सालेह (?)
६० तुलसीदास
६१ अजामिल
६२ गणिका
६३ विल्व मंगल
६४ गोपाला
६५ जड़ भरत
६६ जनक

राजा नागरीदास जी के "पदप्रसंगमाला" से

१ जयदेव
२ परमानंद दास
३ नामदेव
४ कबीर
५ रैदास
६ नरसी
७ मीराबाई
८ चतुरदास उपनाम खोजी
९ मुरारिदास
१० राघोदास
११ तुलसीदास
१२ मानिकचंद
१३ छीतस्वामी
१४ व्यासजी
१५ हित हरिवंश
१६ सूरदास

१७ हरिदास स्वामी
१८ कृष्णदास अधिकारी
१९ कुंभनदास
२० चतुर्भुजदास
२१ गदाधर भट्ट
२२ सूरदास मदनमोहन
२३ खड्गसेन
२४ नरवाहन
२५ मधुकर शाह
२६ नागरीदास
(बरसानेवाले)
२७ भगवान हित रामराय
२८ बीरबल
२९ किशोरीदास
३० श्यामदास
३१ नारायनदास
३२ राजा रूपसिंह
३३ तुलाराम उपनाम
बावरी सखी
३४ राजा नागरीदास
३५ वल्लभरसिक
३६ गौरी गूजरी

श्रीहरि

अथ भक्तनामावली

~

दोहा

हरिवंश नाम ध्रुव कहत ही बाढ़ै आनँद बेलि ।
प्रेम रँगी उर जगमगै नवल जुगल वर केलि ॥ १ ॥
निगम ब्रह्म परसत नहीं सो रस सब तें दूरि ।
कियौ प्रगट हरिवंश जी रसिकनि जीवनिमूरि ॥ २ ॥
वन चंद चरन अंबुज भजहिं मन क्रम वचन प्रतीति ।
वृंदावन निज प्रेम की तब पावै रस रीति ॥ ३ ॥
कृष्णचंद्र के कहत ही मन को भ्रम मिटि जाइ ।
विमल भजन सुख-सिंधु मैं रहै चित्त ठहराइ ॥ ४ ॥
श्री गोपिनाथ पद उर धरै महा गोप्य रससार ।
बिनु बिलंब आवै हियै अद्भुत जुगल बिहार ॥ ५ ॥
पति कुटुंब देखत सबै घूँघट पट दिय डारि ।
देह गेह बिसरयो तिन्हैं मोहन रूप निहारि ॥ ६ ॥
धीर गँभीर समुद्र सम सील सुभाउ अनूप ।
सब अँग सुंदर हँसत मुख सुंदर सुखद सरूप ॥ ७ ॥

शुक नारद उद्धव जनक प्रह्लादिक सनकादि।
ज्यौं हरि आपुन नित्य हैं त्यौं ये भक्त अनादि ॥ ८ ॥
प्रगट भयो जयदेव मुख अद्भुत गीतगुविंद।
कह्यो महा सिंगार रस सहित प्रेम मकरंद ॥ ९ ॥
पदमावति जयदेव प्रेम बस कीने मोहन।
अष्टपदी जो कहै सुनत फिरैं ताके गोहन ॥ १० ॥
श्रीधर स्वामी तौ मनो श्रीधर प्रगटे आनि।
तिलक भागवत कियो रचि सब तिलकनि परवानि ॥ ११ ॥
रसिक अनन्य हरिदास जू गायो नित्य विहार।
सेवा हू मैं दूर किय विधि निषेध जंजार ॥ १२ ॥
सघन निकुंजनि रहत दिन बाढ़यौ अधिक सनेह।
एक विहारी हेत लगि छाड़ि दिए सुख देह ॥ १३ ॥
रंक छत्रपति काहु को धरी न मन परवाह।
रहे भींजि रस प्रेम मैं लीने कर करवाह ॥ १४ ॥
बल्लभ सुत विट्ठल भए अति प्रसिद्ध संसार।
सेवा विधि जिहि समै को कीनी तिन व्यौहार ॥ १५ ॥
राग भोग अद्भुत विविध जो चहिए जिहिकाल।
दिनहि लड़ाए हेत सो गिरिवर श्री गोपाल ॥ १६ ॥
गौड़ देस सब उद्धरयौ प्रगटे कृष्ण चैतन्य।
तैसेहि नित्यानंद हू रसमय भए अनन्य ॥ १७ ॥
पावत ही तिनको दरस उपजै भजनानंद।
तिनहीं सम छुटि जाहिं सब जे माया के फंद ॥ १८ ॥

रूप सनातन मन बढ़्यो राधाकृष्णाऽनुराग ।
जानि बिस्व नस्वर सबै तब उपज्यो बैराग ॥ १९ ॥
बिष समान तजि बिषय सुख देस सहित परिवार ।
वृंदावन कों चले यों ज्यों सावन जलधार ॥ २० ॥
तृन ते नीचौ आपकों जानि बसे बन मॉंहि ।
मोह छॉंड़ि ऐसे रहे मनौ चिन्हारिहु नाहिं ॥ २१ ॥
रघुनंदन सारंग जी जीवति पाछें आए ।
कृष्ण कृपा करि सबै आनि निज धाम बसाए ॥ २२ ॥
भजनरासि रघुनाथ जी राधाकुंड स्थान ।
लीन तक्र ब्रज को लयौ परस्यो नहिं कछु आन ॥ २३ ॥
वंदन करि कै चिंतवन गौर स्याम अभिराम ।
सोवत हूँ रसना रटै राधाकृष्ण सुनाम ॥ २४ ॥
श्रीविलास ब्रजनाथ अरु श्री चद मुकुंद प्रवीन ।
मदनमोहन पद कमल सों अधिक प्रीति जिन कीन ॥ २५ ॥
महापुरुष नंदा भए करि तन सकल सिँगार ।
सखी रूप चिंतत फिरैं गौर स्याम सुकुँवार ॥ २६ ॥
नैन सजल तिहिं रंग मैं चित पायो बिस्राम ।
बिवस वेगि ह्वै जात सुनि लाल लाडिली नाम ॥ २७ ॥
कृष्णदास हुते जंगली तेऊ तैसी भॉंति ।
तिनके उर झलकत रहै हेम नील मनि कॉंति ॥ २८ ॥
जुगल प्रेम रस अब्धि मैं पर्‍यो प्रबोध मन जाइ ।
वृंदावन रस माधुरी गाई अधिक लड़ाइ ॥ २९ ॥

अति विरक्त संसार तें वसे विपिन तजि भौन ।
प्रीति सहित गोपाल भट सेए राधारौन ॥ ३० ॥
घमंडी रस में घमड़ि रह्यौ वृंदावन निज धाम ।
वंसीवट तट रास कै सेए स्यामास्याम ॥ ३१ ॥
भट्टनरायन अति सरस व्रज मंडल सों हेत ।
ठौर ठौर रचना करी प्रगट किये संकेत ॥ ३२ ॥
वर्द्धमान श्रीभट्ट अरु गंगल व्रज वृंदावन आये ।
करि प्रतीति सर्वोपरि जान्यो तातैं चित्त लगायौ ॥ ३३ ॥
भट्ट गदाधर नाथभट विद्या भजन प्रवीन ।
सरस कथा वानी मधुर सुनि रुचि होत नवीन ॥ ३४ ॥
गोविंदस्वामी रंग अरु विष्णुविचित्र बनाइ ।
पिय प्यारी को जस कह्यौ राग रंग सों गाइ ॥ ३५ ॥
मनमोहन सेवा अधिक कीनी है रघुनाथ ।
न्यारियै रस के भजन की बात परी तिहि हाथ ॥ ३६ ॥
गिरिधर स्वामी पर कृपा बहुत भई दई कुंज ।
रसिक रसिकनी को सुजस गायो तिहि रस पुंज ॥ ३७ ॥
वीठल-विपुल-विनोद रस गाऊँ अद्भुत केलि ।
विलसत लाड़िलि लाल सुख अंसनि पर भुज मेलि ॥ ३८ ॥
विहारिदास निज एक रस जो स्वामी की रीति ।
निरवाही पाछैं भली तोरि सबनि सों प्रीति ॥ ३९ ॥
मत्त भयो रस रंग में करी न दूजी बात ।
बिनु विहार निज एक रस और न कछू सुहात ॥ ४० ॥

वर किशोर दोउ लाड़िले नवल प्रिया नव पीय।
प्रगट देखियत जगत मैं रसिक व्यास के हीय ॥ ४१ ॥
कहनी करनी करि गयौ एक व्यास इहि काल।
लोक वेद तजिकै भजे श्री राधावल्लभलाल ॥ ४२ ॥
प्रेम मगन नहिं गन्यौ कछु बरनाबरन विचार।
सबनि मध्य पायो प्रगट लै प्रसाद रस सार ॥ ४३ ॥
सेवक की सरि को करै भजन सरोवर हंस।
मन बच कै धरि एक व्रत गाए श्री हरिवंस ॥ ४४ ॥
वंस बिना हरिनाम हूँ लियौ न जाके टेक।
पावै सोई वस्तु कों जाके है व्रत एक ॥ ४५ ॥
कहा कहौं कहि नहिं सकौं नरवाहन को भाग।
श्री मुख जाको नाम धर्‌यो निज बानी अनुराग ॥ ४६ ॥
अति अनन्य निज धर्म मैं नाइक रसिक मुकुंद।
बसे विपिन रस भजन कै छाँड़ि जगत दुख दुंद ॥ ४७ ॥
परम भागवत अति भए भजन माहि दृढ धीर।
चतुर्भुज वैष्णवदास की बानी अति गंभीर ॥ ४८ ॥
सकल देस पावन कियौ भगवत जसहिं बढ़ाइ।
जहाँ तहाँ निज एक रस गाई भक्ति लड़ाइ ॥ ४९ ॥
परमानन्द किसोर दोउ संत मनोहर खेम।
निर्बाह्यौ नीके सबनि सुंदर भजन को नेम ॥ ५० ॥
छाँड़ि मोह अभिमान सब भक्तनि सों अति दीन।
वृंदावन बसिकै तिनहिं फिरि मन अनत न कीन ॥ ५१ ॥

लालदास स्वामी सरस जाके भजन अनूप।
वरन्यौ अति दृढ़ अच्छरनि लाल लाडिली रूप ॥ ५२ ॥
अधिक प्यार है भजन सों और न कछू सुहात।
कहत सुनत भगवत जसहिं निसि दिन जाहि विहात ॥ ५३ ॥
बालकृष्ण गति छाह कहौं कैसेहु कहत बनै न।
रूप लाड़िली लाल कौ भेलमलात तिहि नैन ॥ ५४ ॥
अति प्रवीन पण्डित अधिक लेस गर्व कौ नाहिं।
कीनी सेवा मानसी निसि दिन मन तिहि माँहिं ॥ ५५ ॥
ज्ञानू नाहरमल्ल की देखी अद्भुत रीति।
हरिवंसचंद पद कमल सों बाढ़ी दिन दिन प्रीति ॥ ५६ ।
कछ कहों मोहनदास रति ताकी गति भई आन।
व्यासनंद अंतर सुनत तजे तिही छिन प्रान ॥ ५७ ॥
विठलदास मुरलीधरन चरन सेए सब काल।
तैसेहि दास गुपाल हूँ गाए ललनी लाल ॥ ५८ ॥
सुंदर मंदिर की टहल कीनी अति रुचि मानि।
सफल करी संपति सकल लगी ठिकाने आनि ॥ ५६ ॥
अंगीकृत ताकौं कियौ परम रसिक सिर मौर।
करुनानिधि बहु कृपा करि दीनी सनमुख ठौर ॥ ६० ॥
बड़ौ उपासिक गौरिया नाम गुसांईदास।
एक चरन बन चंद बिनु जाकें और न आस ॥ ६१ ॥
नेही नागरिदास अति जानत नेह कि रीति।
दिन दुलराई लाड़िली लाल, रँगीली प्रीति ॥ ६२ ॥

ब्यासनंद पद सों अधिक जाके दृढ़ विस्वास ।
जिहि प्रताप यह रस लह्यौ अरु वृंदावन बास ॥ ६३ ॥
भली भाँति सेयौ विपिन तजि बंधुनि सों हेत ।
सूर भजन सैं एक रस छाड़्यो नाहिन खेत ॥ ६४ ॥
विहारिदास, दंपति, जुगल, माधौ, परमानंद ।
वृंदावन नीके रहे काटि जगत को फंद ॥ ६५ ॥
नीको भाँति मुकुंद को कैसेहुँ कहत बनैन ।
बात लाड़िली लाल की सुनि भरि आवत नैन ॥ ६६ ॥
मन बच करि विस्वास धरि सारि हिए के काम ।
मातु पिता तिय छाँड़ि के बस्यो वृंदावन धाम ॥ ६७ ॥
अंतकाल गति काहु कहीं कैसेहु कही न जाति ।
चतुरदास वृन्दाविपिन पायौ आछी भाँति ॥ ६८ ॥
चिंतामनि बातनि सरस सेवा माहि प्रवीन ।
कहत विवधि भगवत जग्गहि छिन छिन उपज नवीन ॥ ६९ ॥
नागर अरु हरिदास मिलि सेए नित हरिदास ।
वृंदावन पायो दुहुनि पूजी मन की आस ॥ ७० ॥
नवल, कल्यानी सखिनि के मन हो अति अनुराग ।
लाल लड़ैती कुँवरि कौ गायौ भाग सुहाग ॥ ७१ ॥
भली भाँति वृंदाअली अति कोमल सुसुभाउ ।
कृपा लड़ैती कुँवरि की उपज्यो अद्भुत भाउ ॥ ७२ ॥
कीनो रास विलास बहु सुख बरसत सकेत ।
रचना रची कल्यान रुचि मोहनिदास समेत ॥ ७३ ॥

सेवा राधारमन की भक्तनि के सनमान।
तातें बसि जमुना कियो तिहि सम नहि कोउ आन ॥ ७४ ॥
दुते उपासक अधिक ही या रस में हरिदास।
निसि दिन बीतैं भजन में राधाकुंड निवास ॥ ७५ ॥
बरसाने गिरिधर सुहृद जाकें ऐसो हेत।
भोजन हू भक्तनि बिना धर्‌यो रहै नहि लेत ॥ ७६ ॥
नंददास जो कछु कह्यो राग रंग में पागि।
अच्छर सरस सनेह मय सुनत स्रवन उठ जागि ॥ ७७ ॥
रसनदसा अद्भुत हुते करत कवित्त सुढार।
बात प्रेम की सुनत ही छुटत नैन जलधार ॥ ७८ ॥
बावरो सो रस में फिरै खोजत नेह कि बात।
आछे रस के बचन सुनि बेगि बिबस ह्वै जात ॥ ७९ ॥
कह्यो कहाँ मृदुल सुभाउ अति सरस नागरी दास।
बिहारी बिहारिनि कौ सुजस गायौ हरखि हुलास ॥ ८० ॥
परमानँद माधौ मुदित नवकिसोर रस केलि।
कही रसीली भाँति सों तिहि रस में रहे भेलि ॥ ८१ ॥
सेयौ नीकी भाँति सों श्री संकेत स्थान।
रह्यो बड़ाई छाँड़ि कै सूरज द्विज कल्यान ॥ ८२ ॥
खरगसेन के प्रेम की बात कही नहिं जात।
लिखित ललित लीला करत गए प्रान तजि गात ॥ ८३ ॥
ऐसेहिं राधौदास की सुनी बात यह कान।
गावत करत धमारि हरि छूटि गए तब प्रान ॥ ८४ ॥

अरविंदन भक्त अद्भुत भयौ और न कछू सुहात।
अंगनि की छबि माधुरी चितत जाहि बिहात ॥ ८५ ॥
रोमांचित तन पुलक ह्वै नैन रहे जल पूरि।
जाकें आसा एकही वृंदावन की धूरि ॥ ८६ ॥
कह कहौं महिमा भाग की भई कृपा सब अंग।
वृंदावनदासी गह्यो जाइ सखिन कौ संग ॥ ८७ ॥
लाज छाँड़ि गिरिधर भजी करी न कछु कुल कानि।
सोई मीरा जग विदित प्रगट भक्ति की खानि ॥ ८८ ॥
ललिता हू लइ बोलि कै तासों हो अति हेत।
आनंद सों निरखत फिरै वृंदावन रस खेत ॥ ८९ ॥
नृत्यत नूपुर बाँधि कै नाचत लै करतार।
विमल हियैं भक्तनि मिली तृन सम गन्यौ संसार ॥ ९० ॥
बधुनि विष ताकों दियौ करि विचार चित आन।
सो विष फिरि अमृत भयौ तब लागे पछितान ॥ ९१ ॥
गंगा, यमुना तियनि मैं परम भागवत जानि।
तिनकी बानी सुनत ही बढ़ै भक्ति उर आनि ॥ ९२ ॥
कुंभन, कृष्ण (दास) गिरिधर (न) सों कीनी साची प्रीति।
कर्म धर्म पथ छाँड़ि कै गाई निज रस रीति ॥ ९३ ॥
पूरनमल, जसवंतजी, भोपति, गोविंददास।
हरीदास इनि सबनि मिलि सेये नित हरिदास ॥ ९४ ॥
परमानँद अरु सूर मिलि गाई सब व्रज रीति।
भूलि जात बिधि भजन की सुनि गोपिन की प्रीति ॥ ९५ ॥

माधौ, रामदास बरसानियाँ ब्रज विहार के खेल ।

... ... ॥ ९६ ॥

गाए नीकी भाँति सौं कवित रीति सब कीन ।

मदनमोहन अपनाइ कै अंगीकृत करि लीन ॥ ९७ ॥

जिनि जिनि भक्तनि प्रीति की ताके बस भए आनि ।

सैन होइ नृप टहल किय नामदेव छाँड़ि छानि ॥ ९८ ॥

जगत विदित पीपा, धना अरु रैदास, कबीर ।

महाधीर दृढ़ एक रस भरे भक्ति गंभीर ॥ ९९ ॥

जगन्नाथ वत्सल भगत कीनो जगत बिस्तार ।

माधोहि भूखो जानि कै ल्याए भोजन प्यार ॥ १०० ॥

एक समै निसि सीत सों काँपन लाग्यो गात ।

आनि उढ़ाई तिहि समै अपने कर सकुचात ॥ १०१ ॥

बिल्वमंगल जब अंध भयो आपुन कर गह्यो आइ ।

भक्तनि पाछें फिरत यौं ज्यों बच्छा संग गाइ ॥ १०२ ॥

रामानंद अंगद, सोभू, हरिव्यास, अरु और ।

एक एक के नाम तें सब जग होइ पुनीत ॥ १०३ ॥

रांका बांका भक्त द्वै सदा भजन रसलीन ।

इंद्रासन के सुखनि कौं मानत तृन तें हीन ॥ १०४

नरसी हो अति सरस हिय कथा देउ समतूल ।

कह्यौ सरस सिंगार रस जानि सुखनि कौ मूल ॥ १०५ ॥

दीनी ताकौं रीझि कै माला नंदकुमार ।

राखि लियौ अपनी सरन त्रिभुवनि मुख दै छार ॥ १०६ ॥

जहँ जहँ भक्तनि को कछू परत है संकट आनि।
तहँ तहँ आपन बीचि ह्वै धरत अभय को पानि ॥ १०७ ॥
भक्त नरायन भक्त सब धरे हिए दृढ़ प्रीति।
बरने आछी भाँति सो जैसी जाकी रीति ॥ १०८ ॥
रसिक भक्त भूतल घने लघुमति क्यों कहि जाहिं।
बुधि प्रमान गाए कछू जे आए उर माहिँ ॥ १०९ ॥
हरि को निज जस सो अधिक भक्तनि जस पर प्यार।
याते यह माला रची करि ध्रुव कंठ सिंगार ॥ ११० ॥
भक्तनि की नामावली जो सुनिहैं चित लाइ।
ताकैं भक्ति बढ़ै घनी अरु हरि होइ सहाइ ॥ १११ ॥
एक बार जिहि नाम लियौ हित सों ह्वै अति दीन।
ताको अंग न छाड़िई ध्रुव अपनौ करि लीन ॥ ११२ ॥
ऐसे प्रभु जिन नहि भजे सोई अति मति हीन।
देखि समुझि या जगत मैं बुरो आपुनौ कौन ॥ ११३ ॥
अजहूँ सोच बिचारि कै गहि भक्तिन पद ओट।
हरि कृपालु सब पाछिली छमिहैं तेरी खोट ॥ ११४ ॥

इति श्री भक्तनामावली संपूर्णम्।

शुभम्

भक्तनामावली में वर्णित महात्माओं का संक्षिप्त ऐतिहासिक वृत्तांत

(१)

गोस्वामि श्री हित हरिवंश जी

दोहा १ ग्रंथकर्ता ध्रुवदास जी श्री हित हरिवंश जी के शिष्य थे, इसलिये सबसे पहिले उन्होंने इन्हीं की वंदना की है। हरिवंश जी का पूर्व स्थान देवनगर इलाका सरकार सहारनपुर था। ये गौड़ ब्राह्मण थे। इनके पिता सुप्रसिद्ध व्यास स्वामि थे, जिनका उपनाम हरीराम शुक्ल था। माता का नाम तारावती था। इनका जन्म मिती वैशाख वदी ११ संवत् १५५९ को और प्रथम विवाह देवनगर में रुक्मिणी नाम्नी स्त्री से हुआ था, जिनसे दो पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुईं। इन सभों के विवाह करने के उपरांत श्रीवृंदावन धाम की इच्छा से ये घर से चले। मार्ग में होडल के पास चरथावल ग्राम मे एक ब्राह्मण मिले जिन्होंने अपनी दो कन्याएँ और एक श्री राधावल्लभजी ठाकुर की मूर्ति इनको अर्पण की। इनको लेकर ये श्री वृंदावन आए। यहाँ मिती कार्तिक शुक्ल १३ संवत् १५८२ को श्री राधारमण जी की मूर्ति स्थापित की, और माध्व संप्रदायांतर्गत श्री राधावल्लभीय संप्रदाय

चलाया। इनके शिष्यों में बहुत से अच्छे अच्छे कवि हुए हैं। इनके संप्रदायवाले अपने नाम के साथ हित लिखते हैं, जैसे हित ध्रुव, हित दामोदर हित हठी आदि। प्रोफेसर विल्सन को श्री राधावल्लभ जी के प्राचीन मंदिर में एक लेख संवत् १६४१ का मिला। अब वह प्राचीन मंदिर भग्नावस्था में पड़ा है। इनकी पहिली स्त्री का वंश देवनंदन में है और पिछली दोनों स्त्रियों का वंश श्री वृंदावन में। इन्होंने संस्कृत में "श्री राधा-सुधानिधि" नामक ग्रंथ बनाया है जिसमें १७० श्लोक हैं। Catalogus Catalogorum के अनुसार इनका बनाया "कर्मा-नंद काव्य" नामक एक संस्कृत ग्रंथ और भी है। भाषा में इनके चौरासी पद प्रसिद्ध हैं। परंतु हमने इनकी इन चौरासी पदों के अतिरिक्त भी कुछ स्फुट कविता देखी है। इनकी शिष्य-परंपरा में नरवाहन नाहरमल्ल, विट्ठलदास, मोहनदास, छबीलदास, नवलदास, बलीदास, परमानंदरसिक, हठी, हरि-दास, खंगसेन, गंगा और यमुना आदि प्रसिद्ध हुए हैं।

(२)

श्री शुकदेव जी

दोहा ८ इनकी कथा पुराणों में प्रसिद्ध है। इन्होंने श्रीमद्भा-गवत के उपदेश से महाराज परीक्षित का उद्धार किया था।

(३)

देवर्षि नारद जी

दोहा ८ इनकी कथा पुराणों में प्रसिद्ध है। लोकोपकार

के निमित्त सदा वीणानाद करते हुए सब लोक में घूमना इनका व्रत था।

(४)

श्री उद्धव जी

दोहा ८ ये भगवान् श्री कृष्णचंद्र के सखा थे। पुराणों मे इनका चरित्र प्रसिद्ध है। ये यादव क्षत्रिय थे। इन्हीं को व्रज-गोपिकाओं को उपदेश करने के लिये भगवान् ने व्रज में भेजा था।

(५)

राजर्षि श्री जनक जी

दोहा ८ ये क्षत्रिय राजा मिथिलादेश के थे। इनकी कथा पुराणों में प्रसिद्ध है। भगवद्भक्ति में ये ऐसे मग्न थे कि देहानुसंधानरहित हो जाते थे; इसी से इनका नाम विदेह हो गया था।

(६)

परम भागवत प्रह्लाद जी

दोहा ८ इनकी कथा पुराणों मे प्रसिद्ध है। इन्हीं के उद्धार के हेतु श्री नृसिंहावतार हुआ था।

(७)

सनकादिक

दोहा ८ सनक, सनंदन, सनातन, सनत्कुमार इन चारों भाइयों की कथा पुराणों में प्रसिद्ध है। इन्हीं के शाप से विष्णु-

पार्षद जय विजय को तीन जन्म तक क्रमशः हिरण्याक्ष-हिरण्यकश्यप, रावण कुंभकर्ण और दंतवक्र-शिशुपाल का राक्षस जन्म लेना पड़ा था।

(८)

महाकवि जयदेव

दोहा ९- इनका रचित "गीतगोविंद" संसार में प्रसिद्ध है। ऐसा कौन सहृदय होगा जो श्री जयदेव जी के गीत-गोविंद को सुनकर मोहित न हो जाता हो। इनका जन्म बंगाल देश के वीरभूमि जिले से प्रायः दस कोस दक्षिण की ओर अजयनद के उत्तर किंदुबिल्व गाव में हुआ था। इनके पिता का नाम भोजदेव और माता का रामादेवी था, तथा स्त्री का नाम पद्मावती था। इनका समय बहुत वाद विवाद से सन् १०२५ ई० से १०५० ई० तक निर्णय किया गया है। भाषा में इनका जीवनचरित्र पूज्य भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र जी ने लिखा है। ये परम विरक्त और भगवद्भक्त थे। Catalogus Catalogorum में इनका बनाया एक "रामगीतगोविंद" भी लिखा है, परंतु (?) संदेह का चिह्न भी दिया है।

(९)

श्रीधर स्वामी

दोहा ११ ये श्री रामानुज संप्रदाय के थे। इन्होंने श्रीमद्भागवत पर टीका की है। वह टीका सर्वमान्य और

अत्यंत प्रसिद्ध है। Catalogus Catalogorum के अनुसार इनके गुरु का नाम परमानंद था और इन्होंने निम्नलिखित टीकाएँ तथा ग्रंथ बनाए थे

१ भगवद्गीता टीका सुबोधिनी २ भगवद्गीतासार टीका ३ भागवतपुराण टीका ४ विष्णुपुराण टीका आत्मप्रकाश ५ वेदस्तुति टीका ६ व्रजविहार भावार्थदीपिका ७ पदार्थप्रकाशिका पुराणटीका (?)

(१०)

श्री स्वामी हरिदास जी

दोहा १२ "भक्तसिंधु" ग्रंथ के आधार पर मिस्टर ग्राउस ने इनका वृत्तांत यों लिखा है कि कोल के पास एक गाँव में, जिसको अब हरिदासपुर कहते हैं, एक सनाढ्य ब्राह्मण ब्रह्मधीर नाम के रहते थे; उनके पुत्र ज्ञानधीर थे, जिनके इष्ट श्री गोवर्धन पर विराजमान श्री गिरिधारी जी थे। इनका विवाह मथुरा में हुआ, और एक पुत्र आशाधीर हुए। आशाधीर जी का विवाह श्री वृंदावन के निकटस्थ राजपुर गाँव के रहनेवाले गंगाधर की पुत्री से हुआ। इन्हीं के गर्भ से मिती भादों बदी* ८ संवत १४४१ को हरिदास जी का जन्म हुआ।

* संभवतः भादों सुदी ८, क्योंकि उसी दिन श्री वृंदावन में मोतीदास जी की टट्टी में इनका जन्मोत्सव महा समारोह के साथ मनाया जाता है। "रास सर्वस्व" ग्रंथ में राधाकृष्ण जी ने इनका जन्म मि० भादों सुदी ८ सं० १४८९ को लिखा है।

हरिदास जी बचपन ही से भगवत् भक्ति में लीन थे। २५ वर्ष की अवस्था में गृहत्यागी होकर श्री वृंदावन में मान-सरोवर पर जा बसे। थोड़े दिन पीछे निधुवन में रहने लगे। निधुवन ही में पहिले पहिल इनके अपने मामा श्री विट्ठल-विपुल जी इनके शिष्य हुए। इसी निधुवन में ही इन्हें श्री बाँकेविहारीजी की मूर्ति भी मिली जिनका बहुत भारी मंदिर अब तक श्री वृंदावन में है और जिनके अधिकारी उक्त स्वामी जी के भाई जगन्नाथ के वंशधर गोसाईं लोग हैं। श्री हरि-दास स्वामी परम विरक्त थे, सदैव भगवान के ध्यान में मग्न रहते थे। एक दिन एक शिष्य ने एक पारस पत्थर भेंट किया, आपने उसे श्री जमुनाजी में फेंक दिया; उसे क्षोभ हुआ तो आपने पारस का ढेर उसे दिखला दिया। एक शिष्य ने एक सहस्र के मूल्य के इत्र की शीशी भेंट की, स्वामी ने उसे बालू में ढरका दी; शिष्य दुखित चित्त जब बिहारीजी के दर्शन को गया तो मूर्ति को उसी इत्र से भीगी हुई देखा। सुप्रसिद्ध गवैये तानसेन जी गान विद्या में इन्हीं के शिष्य थे। एक समय अकबर ने चाहा कि स्वामी जी का गाना सुनें, परन्तु यह कठिन था, तब तानसेन बादशाह* के हाथ सेवक के रूप में तानपूरा लिवाकर गया। स्वामी जी अपने प्राचीन शिष्य को देख प्रसन्न हुए। तानसेन ने कुछ गाया, पर जानकर चूक की, तब स्वामी ने स्वयं गाकर बताया। बादशाह मोहित हो

* यह चित्र अब तक श्री वृंदावन में वर्तमान है।

स्वामी के चरणों में गिरा और उसी समय मोरों और बंदरों के खाने के निमित्त उसने कुछ जागीर बाँध दी। हरिदास स्वामी की मृत्यु का संवत् १५३७ लिखा है। परंतु इसमें भ्रम है। एक तो स्वामी जी के वंशधर लोग कहते हैं कि सनाढ्य नहीं सारस्वत थे, कोल नहीं मुलतान के निकटस्थ उच्चगाँव के थे और चार सौ वर्ष नहीं तीन सौ वर्ष पहिले इनका समय था। जो कुछ हो, इनका समय संवत् १६०० के लगभग का निश्चय है। प्रोफेसर विलसन इनको चैतन्य महाप्रभु के संप्रदायांतर्गत लिखते हैं; परंतु यह उनका भ्रम है, इनसे चैतन्य महाप्रभु से कोई संबंध नहीं है। इनके बनाए केवल दो छोटे छोटे पदों के ग्रंथ हैं एक साधारण सिद्धांत और दूसरा रस के पद। अपनी कविता में ये अपना इतना बड़ा छाप रखते थे "श्री हरिदास के स्वामी श्यामा कुंज बिहारी"। इनके पद गवैयों के अतिरिक्त किसी दूसरे को गाना कठिन है। इनकी शिष्य-परंपरा यों है—स्वामी हरिदास, बिट्ठलविपुल, बिहारिनिदास, नागरीदास, सरसदास, नवलदास, नरहरदास, रसिकदास, ललितकिशोरी और मौनीदास जी—ये सभी प्रायः सुकवि थे। इनके तीन स्थान श्री वृंदावन में पूज्य हैं। १—श्री बाँकेबिहारी जी का मंदिर, २ निधुवन, ३ मौनीदासजी की टट्टी।

(११)

श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु

दोहा १५ श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु तैलंग ब्राह्मण थे।

इनके पिता का नाम लक्ष्मण भट्ट और माता का इल्लमगारू था। इनका जन्म संवत् १५३५ मिती वैशाख वदी ११ को चंपारन-सारन के पास चौरा गाँव में हुआ, जब कि इनके माता पिता काशी आ रहे थे। काशी मे ५ वर्ष की अवस्था मे इन्होंने सुप्रसिद्ध माध्वाचार्य जी से विद्याध्ययन किया। इनके दो भाई और थे, बड़े रामकृष्ण और छोटे रामचद्र। ये दोनों ही संस्कृत के बड़े कवि थे। संवत् १५४८ मे १३ वर्ष की अवस्था मे इन्होंने विजयनगर के राजा कृष्णदेव की सभा में शांकर मतवालों को शास्त्रार्थ में जीता। उस समय विष्णुस्वामी की गद्दी खाली थी, सब महंत आचार्यों ने इन्हे उस गद्दी पर बैठाया और वल्लभाचार्य इनका नाम हुआ। डाक्टर ग्रिअर्सन अनुमान करते हैं कि यह कृष्णदेव संभवतः कृष्ण रायलू हैं जो सन् १५२० ई० में राज्य करते थे। इस दिग्विजय के पीछे ये फिर काशी आए और यहाँ के पंडितों को शास्त्रार्थ मे जीता। फिर व्रज गए और वहाँ श्री गोवर्द्धन की कंदरा में जो श्री गिरिधर जी जिन्हें देवदमन भी कहते हैं (जिनका नाम अब श्रीनाथ प्रसिद्ध है) की मूर्ति विराजती थी, उन्हें पधराकर* सेवा की वात्सल्य भाव से एक नवीन ही प्रणाली निकाली। औरंगजेब के उपद्रव से ये इस मूर्ति

* श्री गिरिराज पर जो श्रीनाथ जी का मंदिर है उसकी नेव वैशाख सुदी ३, संवत् १५५६ को पड़ी। पूर्णमल्ल खत्री अम्बालेवाले ने यह मंदिर बनवाया और संवत् १५७६ में श्रीनाथ जी इसमें विराजे।

को मेवाड़ में उठा ले गए। वहाँ श्रीनाथ जी का बड़ा भारी वैभव है और लाखों रुपया वार्षिक भोगराग में व्यय होता है। इसके पीछे इन्होंने तीन बार भारत-भ्रमण किया (जिसको ग्रंथों में पृथ्वी परिक्रमा कहते हैं) और निज मत का प्रचार किया। भारतवर्ष के प्रायः सभी तीर्थों और देवस्थानों में इनकी बैठक हैं। जहाँ जहाँ इन्होंने बैठकर एक सप्ताह में श्री मद्भागवत का संपूर्ण पारायण किया है, वहाँ वहाँ बैठक स्थापित हुई हैं। ऐसी ८४ बैठकें हैं। इन्होंने संस्कृत में छोटे बड़े बहुत से ग्रंथ बनाए हैं। श्री मद्भागवत पर सुबोधिनी नाम्नी टीका, ब्रह्मसूत्र पर अणुभाष्य नाम का भाष्य और जैमिनीय सूत्र पर भाष्य बनाया है। Catalogus Catalogorum के अनुसार ५२ ग्रंथ इनके बनाए हैं, इनके मुख्य सेवक (शिष्य) ८४ थे जिनका वृत्तांत इनके पौत्र श्री गोस्वामी गोकुलनाथ जी ने "चौरासी वैष्णवों की वार्ता" नामक ग्रंथ में दिया है। इनमें से बहुतेरे हिंदी के प्रसिद्ध कवि थे। सूरदास, परमानंददास, कृष्णदास और कुंभनदास तो ऐसे प्रसिद्ध हुए कि अष्ट* छाप में गिने गए। इनकी स्त्री का नाम लक्ष्मी बहू जी था। इनके दो पुत्र थे, गोस्वामी गोपीनाथ जी, और गोस्वामी विट्ठलनाथ जी। गोस्वामी गोपीनाथ जी का वंश नहीं चला। गोस्वामी विट्ठलनाथ जी बहुत प्रसिद्ध हुए। इन्होंने मिती आषाढ़ वदी २ संवत् १५८७ को काशी में आकर हनुमान

*अष्टछाप का विवरण गोस्वामी विट्ठलनाथजी के प्रसंग में देखिए।

घाट पर शरीर छोड़ा। उस समय संन्यास ले लिया था, और सशरीर गंगा जी मे अपने पुत्रों को उपदेश करते करते प्रवेश किया था। यहाँ पर इनकी बैठक अब तक विद्यमान है; और इसी महल्ले में प्रायः तैलंग लोग आकर बसते हैं। श्री वल्लभाचार्य जी ने अंत समय में साढ़े तीन श्लोकों मे अपने पुत्रो को उपदेश दिया था।

यूरोपियन विद्वानों ने भ्रम से इन्हे राधावल्लभीय संप्रदाय-प्रवर्तक लिखा है। उसके प्रवर्तक हित हरिवंश जी थे। इनकी संप्रदाय गोकुलस्थ संप्रदाय कहलाती है, और यद्यपि ये भाषा कविता के बड़े उन्नायक थे, परंतु स्वयं भाषा के कवि नहीं थे। वल्लभ कवि दूसरे ही थे।

(१२)

गोस्वामि श्री विट्ठलनाथ जी

दोहा १५ ये श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के कनिष्ठ पुत्र थे। इनका जन्म मि० पौष शुक्ल ९ सं० १५७२ को चुनार में हुआ था। यह स्थान इस संप्रदाय में परम पूजनीय है इन्होंने संस्कृत मे बहुतेरे ग्रंथ बनाए हैं, Catalogus Catalogorum के अनुसार इनके रचित ४९ ग्रंथ हैं। भाषा कविता इन्होने स्वयं तो नहीं की है परंतु उसका प्रोत्साहन बहुत कुछ किया है। इनके मुख्य शिष्य २५२ थे जिनका चरित्र इनके पुत्र गोस्वामी गोकुलनाथ जी ने "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता" में लिखा है। इनमे से बहुत से अच्छे कवि थे, जिनमे से

चार अत्यंत प्रसिद्ध थे गोविंद स्वामी, छीत स्वामी, चतुर्भुज-दास और नन्ददास। इन अपने चार कवि शिष्य और सूरदासादि ४ अपने पिता के शिष्यों को मिलाकर आठ कवियों को इन्होंने अष्टछाप की उपाधि दी जो अब तक परम मान्य है। श्री गोवर्द्धननाथ जी की सेवा की शैली और ठीक वात्सल्य भाव से सेवा करने की प्रणाली इन्होंने चलाई। आठ भोग और आठ दर्शन नियत किए। विना समय दर्शन किसी को नहीं मिल सकता। दर्शन के लिये आमेर (जयपुर) नरेश महाराज मानसिंह को भी घंटों ठहरना पड़ा था, और बहुत कुछ भेंट का लालच देने पर भी विना समय के वे दर्शन नहीं पा सके थे। इस संप्रदाय में इनका मान्य स्वयं मत प्रवर्तक इनके पिता से कम नहीं है। इनके समय से श्रीनाथ जी का वैभव बहुत कुछ बढ़ा, इनका मुख्य स्थान गोकुल होने के कारण इनकी संप्रदाय को लोग गोकुलस्थ संप्रदाय कहते हैं। इनके सात पुत्र हुए श्री गिरिधर जी, श्री गोविंद जी, श्री बालकृष्ण जी, श्री गोकुलनाथ जी, श्री रघुनाथ जी, श्री यदुनाथ जी और श्री घनश्याम जी। ये सातों ही पंडित और भगवद्भक्त थे। सात मुख्य ठाकुर जी श्री वल्लभाचार्य जी के सेव्य थे, इन सातों के हिस्से एक एक आए और यह सात गद्दिएँ स्थापित हुईं। श्री नवनीतप्रिय जी, श्री द्वारिकानाथ, श्री मथुरानाथ, श्री विट्ठलनाथ, श्री गोकुलनाथ, श्री गोकुलचन्द्रमा जी और श्री मदनमोहन जी। श्रीनाथ जी

सबके ठाकुर रहे। अब भी इन एक एक स्थानों मे पचास साठ हजार रुपया वार्षिक का व्यय है। इस समय इनमे से तीन गद्दी मेवाड़ राज्य में, एक कोटा राज्य मे, दो कामवन जिला मथुरा मे और एक गोकुल जिला मथुरा मे है। श्री गिरिधर जी के समय तक सेवा मे सब लोग केवल संस्कृत बोलते थे। अब प्रायः व्रजभाषा बोलते हैं। विधर्मियों का नाम सेवा के समय नहीं लेते। गाजीपुर को गुलाब का गाँव, मिर्जापुर को मिर्च का गाँव, मुसलमानों को बड़ी जाति, कृस्तानों को टोपीवाले, आदि कहते हैं। इस संप्रदाय के जितने और जहाँ मंदिर हैं, भीतरी बनावट प्रायः सभों की एक सी है और सेवा की प्रणाली तो सबकी एक हई है। विट्ठल कवि भ्रम वश लोग इन्हीं को समझते हैं, परन्तु यह भाषा के कवि नहीं थे। सं० १६४२ मिती माघ कृष्ण ७ को इन्होंने इस लोक को छोड़ा।

(१३)

श्री कृष्णचैतन्य महाप्रभु

दोहा १७,१८ - मिती फाल्गुन सु० १५ संवत् १५४२ (शाके १४०७) को संध्या समय बंगदेश के नवद्वीप नगर में इनका जन्म हुआ। उस दिन चंद्रग्रहण था। पिता का नाम जगन्नाथ मिश्र और माता का शचीदेवी था। इनका पूर्व नाम विश्वंभर था। विद्या में ये केशवपुरी के शिष्य थे, और दीक्षा गुरु इनके माधवेंद्र थे। बालकाल मे ये बड़े ही उपद्रवी थे, इनके माता पिता को सदा उलहना मिला करता था।

बाल्यावस्था ही में इनको पितृ-वियोग हो गया था और बड़े भाई विश्वरूप पहिले ही से संन्यासी हो गए थे, इससे इन्हें कुछ दिनों तक गृहस्थाश्रम में रहना पड़ा था। इनका विवाह लक्ष्मीदेवी से हुआ था। उस समय सारे बंगदेश मे शाक्त धर्म का बड़ा प्रचार था। तंत्र मंत्र का बड़ा जोर था। चैतन्यदेव के हृदय में बचपन ही से भगवद्भक्ति का अंकुर जम गया था। २४ वर्ष की अवस्था में गृहत्यागी हो, सारे देश में इन्होंने भगवद्भक्ति का स्रोत बहा दिया। हरिनाम से सारे देश को पवित्र कर दिया। शेष जीवन अर्थात् २४ वर्ष तक योंही देशदेशांतर में भ्रमण कर और बंगदेश में वैष्णवता का प्रवाह बहाकर संवत् १५९० में ये परलोकगत हुए। इस २४ वर्ष में ६ वर्ष तक तो ये व्रज, जगदीशपुरी आदि तीर्थस्थानों में भ्रमण करके निजमतप्रचार और उपयुक्त शिष्यमंडली संघटन करते रहे; फिर व्रज मंडल में अपने शिष्य रूप और सनातन गोस्वामी पर तथा बंगदेश में अद्वैत और नित्यानंद महाप्रभु पर धर्मप्रचार का भार छोड़कर आप १८ वर्ष तक नीलाचल में श्री जगन्नाथ जी की सेवा में नियुक्त रहे। चैतन्यदेव, अद्वैत और नित्यानंद इन तीनों का इस संप्रदाय में समान आदर है, तीनों महाप्रभु कहलाते हैं। इनके अतिरिक्त रूप सनातनादि ६ गोस्वामी आदिमहंत कहे जाते हैं, और उनका बड़ा मान्य है। इन लोगों के वंशधर श्री वृंदावन, नदिया, शांतिपुर आदि स्थानो में गोस्वामी कहलाते हैं, और उनका

बड़ा मान्य है। इनके अतिरिक्त इस संप्रदाय के ६४ महंत प्रसिद्ध हैं। इनमें से बहुत लोगों का नाम इस "भक्तनामावली" मे है। Catalogus Catalogorum में चैतन्य देव के बनाए इतने संस्कृत ग्रंथ लिखे हैं

गोपाल चरित्र, तत्त्वसार, प्रेमामृत, संक्षेप भागवतामृत, हरिनाम कवच।

चैतन्यदेव को लोग कृष्णावतार मानते हैं।

(१४)

श्री नित्यानंद महाप्रभु

दोहा १७, १८ इनको Catalogus Catalogorum में कृष्णचैतन्य का भाई लिखा है, परंतु बाबू अक्षयकुमार दत्त ने अपने "भारतवर्षीय उपासक सप्रदाय" मे इन्हें नवद्वीप के एक राढ़ीय सभ्रांत वंश का लिखा है। सांप्रदायिक ग्रंथों में इनको बलराम जी का अवतार माना है इससे ये चैतन्य देव के बड़े भाई जान पड़ते हैं। ये गृहस्थ थे और इनका वंश अब तक नवद्वीप में परम मान्य है। Catalogus Catalogorum मे इनको गंगादेवी का पिता लिखा है। चैतन्य देव ने इन पर बंगदेश में वैष्णव धर्म के प्रचार का भार दिया था।

(१५)

श्री रूप गोस्वामी

दोहा १९,२०,२१ कर्णाट देश के राजा सर्वज्ञ नामक थे। उनके पुत्र अनिरुद्ध देव, उनके रूपेश्वर और हरिहर, रूपेश्वर

के पद्मनाभ, उनके पुरुषोत्तम, जगन्नाथ, नारायण, मुरारी और मुकुंद ये पाँच पुत्र, मुकुंद के कुमार, उनके सनातन, रूप और वल्लभ ये तीन पुत्र हुए (See Catalogus Catalogorum page 701)। "भक्तमाल" की टीका के अनुसार ये लोग वंग-देश में रहते थे और बादशाही पदाधिकारी थे। चित्त में वैराग्य उदय होने से ये लोग सब छोड़ श्री नित्यानंद महाप्रभु के शिष्य हुए और गुरु के आज्ञानुसार श्री वृंदावन में आकर धर्म प्रचार करने लगे। मिस्टर ग्राउस के लेखानुसार उस समय श्री वृंदावन में वन ही वन था, कुछ झोपड़े मात्र थे। इन दोनों भाइयों ने अपने शिष्य नारायण भट्ट की सहायता से सब तीर्थों और देवस्थानों का पता लगा लगाकर मूर्तियाँ स्थापित कीं। रूप गोस्वामी के सेव्य श्री गोविंददेव जी ठाकुर थे। इन गोविंददेव जी का मंदिर बहुत भारी श्री वृंदावन में आमेर (जयपुर) के राजा मानसिंह ने संवत् १६४५ में बनवाया था। "भक्तमाल" की टीका के अनुसार इस मंदिर के बनने में केवल मसाले और मजूरी में तेरह लाख रुपए लगे थे। औरंगजेब के उपद्रव से इनकी मूर्ति को महाराज जयसिंह जयपुर उठा ले गए और राजमहल में बड़ा भारी मंदिर बनवाकर पधराया। राज्य में अब तक इन्हीं की मुहर चलती है। उस समय से वृंदावन का वह मंदिर टूटा फूटा पड़ा था। सन् १८७३ ई० में मिस्टर ग्राउस की कृपा से गवर्मेंट ने पाँच हजार रुपया लगाकर इस मंदिर की

मरम्मत करा दी है। यह मंदिर दर्शनीय है। मिस्टर ग्राउस अनुमान करते हैं कि ब्रह्मवैवर्त पुराण इन्हीं ने बनाया। इन दोनों भाइयों की अस्थि श्री राधादामोदर जी के मंदिर (श्री वृंदावन) में संचित है।

Catalogus Catalogorum के अनुसार निम्नलिखित ग्रन्थ इनके रचित हैं

१ उज्वल नीलमणि	१५ प्रीति संदर्भ
२ उत्कलिकावल्लरी (सन् १५५० में बनाया)	१६ प्रेमेंदुसागर
३ उद्धवदूत	१७ भक्तिरसामृतसिंधु (?)
४ उपदेशामृत	१८ मथुरामहिमा
५ कार्पण्य पुंजिका	१९ मुकुंद मुक्तारत्नावलि टीका
६ गंगाष्टक	२० यमुनाष्टक
७ गोविंद विरुदावली	२१ रसामृत
८ गौरांगसुरकल्पतरु	२२ ललितमाधव नाटक
९ चैतन्याष्टक	२३ विदग्धमाधव नाटक (सन् १५४९ में बनाया)
१० छंदोष्टादशक	२४ विलापकुसुमांजलि
११ दानकेलिकौमुदी	२५ व्रजविलासस्तव
१२ नाटक चंद्रिका	२६ शिक्षादर्शक
१३ पद्यावली	२७ संक्षेपामृत
१४ परमार्थ संदर्भ	२८ साधन पद्धति

२९ स्तवमाला | ३१ हरिनामामृत व्याकरण(?)
३० हंसदूतकाव्य | ३२ हरेकृष्ण महामंत्रार्थनिरूपण

(१९)

श्री सनातन गोस्वामी

दोहा १९, २०, २१ ये महानुभाव रूप गोस्वामी जी के बड़े भाई थे। ये दोनों भाई एक साथ ही रहे और व्रजमंडल मे वैष्णव धर्म का प्रचार करते रहे। इनके सेव्य ठाकुर श्री मदनमोहन जी का बहुत बड़ा मंदिर श्री वृंदाबन में है। ठाकुर जी की मूर्ति करौली राज्य में विराजती है। इस मंदिर के शिलालेख से पता लगता है कि इसके बनवानेवाले कोई गुणानंद नामक महाशय थे। परंतु बनने का समय नहीं दिया है। एक दूसरा लेख मिला है जिसमें किसी ने संवत् १६८४ मे दर्शन करके अपना नाम खुदवा दिया था। अतः यह मंदिर इसके पहिले का बना है। इन्हीं मदन-मोहन जी के शिष्य एक सूरदास जी बड़े कवि थे। वे संडीले के अमीन थे, और उनकी भक्ति की बहुत कुछ कहावत प्रसिद्ध हैं। सनातन गोस्वामी ने Catalogus Catalogorum के अनुसार इतने ग्रंथ बनाए

१ उज्वल रसकणा | ५ भक्तिरसामृतसिंधु
२ उज्वल नीलमणि टीका | ६ भागवत क्रमसंदर्भ
३ भक्तिबिंदु | ७ भागवतामृत
४ भक्तिसंदर्भ | ८ योगशतक व्याख्यान

९ विष्णुतोषिणी
१० स्तवमाला (?)
११ हरिभक्ति विलास

इनका विशेष चरित्र रूप गोस्वामी (नं० १५) के वर्णन में देखिए।

(१७)

रघुनंदन

दोहा २२ इनका किसी ग्रंथ में कुछ पता नहीं चलता। संभवतः ये चैतन्य संप्रदाय के थे। ध्रुवदास जी के लेख से जान पड़ता है कि कहीं बाहर के रहनेवाले थे, परंतु अंतावस्था में व्रज में आ रहे थे। Catalogus Catalogorum में कई रघुनंदन का नाम मिलता है।

(१८)

सारंग जी

दोहा २२ इनका वर्णन पूर्वकथित रघुनंदन के साथ हुआ है। इससे यह भी कहीं बाहर के रहनेवाले जान पड़ते हैं, परंतु व्रज में आ रहे थे। चैतन्य संप्रदाय के ६४ महंतों में एक सारंगदास का नाम मिलता है।

(१९)

रघुनाथ जी

दोहा २४ ये चैतन्य संप्रदाय के ६४ महंतों में थे, और रघुनाथ गोस्वामी कहलाते थे तथा बंगदेश के अच्छे

जिमींदार थे। सब छोड़कर पहिले ये श्री जगदीशपुरी में रहे, फिर ब्रज में आए। ब्रज में आकर श्री राधाकुंड पर रहे। ब्रज के नमक और दधि के अतिरिक्त और कुछ इन्होंने भोजन न किया। रात दिन ये श्री राधाकृष्ण जपा करते थे। Catalogus Catalogorum मे रघुनाथदास गोस्वामी रचित इतने ग्रंथों के नाम मिलते हैं

गुणलेश सुखद, मनःशिक्षा, सुरावली।

(२०)

श्री विलास

दोहा २५ ध्रुवदास जी के लिखने से श्री विलास, ब्रजनाथ (नं० २१) और श्री चंद मुकुंद या श्री मुकुंद चंद (नं० २२) ये तीनों महात्मा सनातन गोस्वामी के सेव्य श्री मदनमोहन जी ठाकुर के परम भक्त थे, और कहीं इनका नाम नहीं मिलता।

(२१)

ब्रजनाथ

दोहा २५—श्री विलास जी (नं०२०) के वर्णन में देखिए।

(२२)

श्री चंद मुकुंद

दोहा २५ श्री विलास जी (नं० २०) के वर्णन मे देखिए। एक मुकुंद चैतन्य संप्रदाय के ६४ महंतों मे भी हैं। मुकुंद नाम के भाषा के भी कई कवि हुए हैं।

(२३)

महापुरुषनंदा

दोहा २६, २७ ध्रुवदास जी के लेख से विदित होता है कि ये सखी का वेश किए हुए भगवद्भक्ति में मग्न श्रीवृंदावन में घूमा करते थे और कहीं इनका उल्लेख नहीं मिलता।

(२४)

कृष्णदास जंगली

दोहा २८ ध्रुवदास जी ने इनको भी भक्तिरस में निमग्न लिखा है। कृष्णदासजी नाम के बहुत से महात्मा हुए हैं। कई एक तो श्रीवल्लभीय संप्रदाय मे हैं। कई भक्तमाल से लिखे हैं। परंतु कृष्णदास जंगली नाम कहीं नहीं मिलता। कृष्णदास पैहारी (नं० १२१ में इनका वर्णन देखिए) अग्रदासजी के गुरु, और कृष्णदास अधिकारी (नं० ६४) श्री वल्लभीय संप्रदाय के, अधिक प्रसिद्ध हैं। एक कृष्णदास बंगाली 'चैतन्य चरितामृत" के कर्त्ता थे। एक हित कृष्णदास भाषा कवि श्री हित हरिवंशजी के संप्रदाय मे भी हुए हैं। एक कृष्णदास कवि "भक्तमाल" के टीकाकार और अमरगीतादि के कर्त्ता हुए हैं। Catalogus Catalogorum मे कई एक संस्कृत कवि कृष्णदास नाम के हैं।

(२५)

प्रबोध वा प्रबोधानंद सरस्वती

दोहा २९ ये श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु के ६४ महंतों में

से थे। बड़े सुकवि थे। बंगाल से आकर श्री वृंदावन वास करते थे। Catalogus Catalogorum में इनके बनाए निम्नलिखित ग्रंथों के नाम हैं

चैतन्यचंद्रामृत, विवेकशतक, वृंदावनशतक, संगीतिमाधव।

(२६)

श्रीगोपाल भट्ट

दोहा २० इनके पिता का नाम व्यंकट भट्ट था। ये श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु के ६४ महंतों में से थे। श्रीराधारमणजी इनके ठाकुर श्री वृंदावन में परम पूज्य हैं। बड़ी मनोहर मूर्ति है। सब छोडकर श्रीवृंदावन वास किया। कहते हैं कि गोपालभट्ट जी शालिग्राम जी की सेवा करते थे, इच्छा हुई कि भगवतमूर्ति होती तो सेवा का आनंद आता। उसी समय शालिग्राम शिला से भगवतमूर्ति का प्रादुर्भाव हुआ। अब तक श्री राधारमण जी की मूर्ति में शालिग्राम जी का आधा टुकड़ा चरण मे और आधा कमर में लगा है। डाक्टर ग्रिअर्सन लिखते हैं कि इनके पुत्र नाथभट्ट जिनका जन्म संवत् १६४१ (सन् १५८४ ईसवी) में था, भाषा के अच्छे कवि थे। इनके वंशज गोस्वामी लोग अब तक श्री राधारमण जी के मंदिर के अधिकारी हैं और उनके शिष्य बहुतेरे इस प्रांत के धनिक लोग हैं।

Catalogus Catalogorum मे इनके रचित ये ग्रंथ लिखे हैं

भगवद्भक्तिविलास, हरिभक्तिविलास।

(२७)

घमंडी

दोहा २१ ध्रुवदासजी के अनुसार ये श्री वृंदावन में वंसीवट पर रहते थे। परम भक्त थे। भक्तमाल में भी इनका नाम मात्र गिनाया है और कहीं कुछ पता नहीं है। रासधारी बिहारीलालजी के पुत्र राधाकृष्णजी के "रासंसर्वस्व" ग्रंथ से इनका पूरा पता लगता है। ये करहला गाँव में रहते थे और श्री स्वामी हरिदास जी की आज्ञा से इन्होंने ही रासलीला का अनुकरण क्रम से आरंभ किया था। इनकी समाधि अब तक करहला में है।

(२८)

श्री नारायन भट्ट

दोहा २२ इनके पिता का नाम भास्कर था। ये सनातन गोस्वामी के शिष्य थे। डाक्टर ग्रिअर्सन के मतानुसार इनका जन्म सन् १५६३ ईसवी में हुआ था। अपने गुरु सनातन गोस्वामी से श्रीमद्भागवत की कथा सुनकर इन्हें भगवद्लीला दर्शन और व्रज के गुप्त स्थानों के प्रगट करने की उत्कट इच्छा हुई, तब इन्होंने पुराणों से पता लगा लगाकर व्रज के सब स्थानों को प्रगट किया और रासलीला का आरंभ कराया। इन दिनों लोग जो व्रजयात्रा करते हैं वह इन्हीं के प्रदर्शित पथ से, और इन्हीं के आविष्कृत स्थान और देवता इस समय पूज्य हैं। इन्होंने सवत् १६१०

(सन् १५५३ ईसवी) में "ब्रजभक्तिविलास" नामक एक ग्रंथ बनाया है, जिसमें ब्रज के स्थानों और माहात्म्य का वर्णन किया है। कहते हैं कि ये बरसाना के पास ऊँचगाँव के रहनेवाले हैं, परंतु उक्त ग्रंथ को उन्होंने श्रीकुंड अर्थात् राधाकुंड पर लिखा है। इस ग्रंथ में उन्होंने १३३ वनों का वर्णन किया है, जिनमें से ९१ यमुनाजी के इस पार हैं और ४२ उस पार (See Growse's Mathura, page 82)। "भक्तमाल" में लिखा है कि ये बड़े पंडित थे और ज्ञान तथा स्मार्तवाद के खंडन में परम निपुण थे। राधाकृष्ण जी रचित "राससर्वस्व" में इनका वृत्तांत यों दिया है कि मथुरा से तेरह कोस पर दक्षिण पश्चिम के कोने में मंदराज गाँव है। वहीं दीक्षित भृगुवंश में संवत् १६५८ में इनका जन्म हुआ। १२ वर्ष की अवस्था में गुरु की आज्ञा से राधाकुंड पर आ बसे। सात बरस वहाँ रहकर संवत् १७१० में बरसाने के पास ऊँचे गाँव में आकर रहे। इसी समय तीर्थों में आ संवत् १७१४ में यथानियम वर्तमान शैली की रासलीला चलाया। परंतु इस लेख से "ब्रजभक्तिविलास" के बनने के समय से पूरे सौ वर्ष का अंतर पड़ता है, जो कि निःसंदेह "राससर्वस्व-कार" की भूल है।

(२९)

वर्द्धमान

दोहा ३३ ये और गंगल भट्ट (नं० ३१) ओझा भट्ट के

पुत्र थे। ये निंबादित्य संप्रदाय के थे। ध्रुवदास जी के लेख से ये कवि जान पड़ते हैं। "भक्तमाल" से विदित होता है कि ये श्रीमद्भागवत की कथा द्वारा उपदेश दिया करते थे और दीनों पर बड़ी दया रखते थे।

(३०)

श्रीभट्ट

दोहा ३३ निंबार्क संप्रदाय के सुप्रसिद्ध केशव भट्ट काश्मीरी के शिष्य थे। भाषा के बड़े प्रसिद्ध और उत्तम कवि थे। डाक्टर ग्रिअर्सन ने इनका जन्म-समय सन् १५४४ ईसवी लिखा है और भ्रम से इन्हीं को केशव भट्ट अनुमान किया है। इनके बनाए युगल-शत आदि भाषा के ग्रंथ हैं। हरिव्यास-देव इनके शिष्य थे, जिनसे हरिवंशी (राधावल्लभी), हरि-दासी, आदि पाँच शाखा निंबार्क संप्रदाय की चली हैं। Catalogus Catalogorum में इनका नाम तो लिखा है, परन्तु इनके बनाए किसी संस्कृत ग्रंथ का नाम नहीं दिया है।

(३१)

गांगल

दोहा ३३ [वर्द्धमान (नं० २६) देखिए] निंबार्क संप्र-दाय की गुरुपरंपरा में इनका नाम है, यथा श्रीनिवासा-चार्य, विश्वाचार्य, पुरुषोत्तमाचार्य, विलासाचार्य, स्वरूपाचार्य, माधवाचार्य, बलभद्राचार्य, पद्माचार्य, श्यामाचार्य, गोपालाचार्य,

कृपाचार्य, देवाचार्य, सुंदर भट्ट, पद्मनाभ भट्ट, उपेंद्र भट्ट, रामचंद्र भट्ट, वामन भट्ट, कृष्ण भट्ट, पद्माकर भट्ट, भूरि भट्ट, माधव भट्ट, श्याम भट्ट, गोपाल भट्ट, बलभद्र भट्ट, गोपीनाथ भट्ट, केशव भट्ट, गंगल भट्ट, केशव काश्मीरी भट्ट, श्रीभट्ट, हरिव्यास देव। Catalogus Catalogorum वाले ने इनका वर्णन गंग भट्ट कहकर किया है, परंतु इनके रचित किसी ग्रंथ का नाम नहीं दिया है।

(३२)

गदाधर भट्ट

दोहा ३४ ये भाषा के अत्युत्कृष्ट कवि थे। इनका निवासस्थान कहीं बाहर था। इनका बनाया "सखी हौं श्याम रंग रंगी" पद सुनकर श्री जीव गोसाईं जी ऐसे मोहित हुए कि अपने शिष्यों को भेजकर ऐसी उत्तेजना दिलाई कि ये सीधे श्री वृंदावन चले आए और फिर आजन्म वहीं रहे। इनकी श्रीमद्भागवत की कथा सुनकर कितने ही लोग विरक्त हो गए। एक कल्याणसिंह क्षत्रिय विरक्त हो गया था। उसकी स्त्री ने एक दुराचारिणी स्त्री के द्वारा इन्हें कथा के समय ही कलंक लगाया, परंतु इन्हें कुछ भी क्षोभ न हुआ; अंत में सच्ची बात खुल गई। इनकी विरक्तता की अनेक कथा प्रसिद्ध हैं। परंतु यह ठीक पता नहीं चलता कि ये कौन थे और कहाँ के थे, दो गदाधर भट्ट श्री कृष्णचैतन्य महाप्रभु के चौसठ महंतों में थे परंतु जीव

गोस्वामी के सख्य से संदेह होता है कि यह उनमें से नहीं थे, क्योंकि चैतन्य महाप्रभु इनके दादागुरु थे और इसमें तो कोई संदेह ही नहीं है कि ये बंगाली कदापि नहीं थे। इनके समान उत्कृष्ट कविता विरले ही कवियों की होती है। डाक्टर ग्रिअर्सन ने एक गदाधरदास को कृष्णदास पयहारी के शिष्य लिखा है, तथाच कृष्णानंद व्यास के प्रसंग मे इनका नाम दिया है। परंतु नं० ५१२ से जिन गदाधर भट्ट बाँदावाले का वर्णन किया है यह वह नहीं हैं। एक गदाधरमिश्र श्री वल्लभाचार्यजी के शिष्यों में भी अच्छे कवि थे।

गदाधर भट्ट जी की बानी "हरिश्चंद्र मेगजीन" मे छप गई है।

(३३)

नाथ भट्ट

दोहा ३४ ये श्री राधारमन जी की गद्दी के महंत श्री गोपाल भट्ट जी के पुत्र थे। भाषा के अच्छे सुकवि थे। ऊँचे गाँव में रहते थे। परम विरक्त थे और रासलीला के बड़े अनुरागी थे।

(३४)

गोविंदस्वामी

दोहा ३५ ये सनौढ़िया ब्राह्मण थे, आंतरी में रहते थे, वहाँ से आकर महावन मे रहे, वहाँ स्वयं लोगों को दीक्षा देते और सेवक करते थे। पीछे गोस्वामी श्रीविट्ठलनाथजी के शिष्य हो गए, और तब से गोवर्धन पर श्रीनाथ जी की सेवा में रहने लगे। कहते हैं कि इनसे श्रीनाथ जी से सख्यभाव था।

ये भाषा के महान् कवि थे, अष्टछाप में इनकी गिनती है। ये गवैए भी बड़े भारी थे, तानसेन भी इनके गाने से मोहित होते थे। इनके बनाए पद बिना गवैयों के गाना कठिन है। एक दिन ये भैरव राग गाते थे, किसी म्लेच्छ ने उसकी प्रशंसा कर दी, तब से वह राग छूट गया, अर्थात् वल्लभीय संप्रदाय में श्री ठाकुर जी के सामने भैरव या भैरवी नहीं गाई जाती। "गोविंदस्वामी की कदंबखंडी" नामक कदंब वृक्ष का उपवन अब तक श्रीगोवर्धन के पास विद्यमान है। "भक्तमाल" की टीका तथा "दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता" में इनका चरित्र विस्तृत रूप से लिखा है।

(३५)

गंग अर्थात् गंगग्वाल

दोहा ३५ "भक्तमाल" में इनका वर्णन है। इन्हें ब्रज-नाथ जी* का चेला लिखा है और लिखा है कि ये बड़े कवि तथा गवैए थे। बादशाह (संभवतः अकबर) जब श्री वृंदावन आया तब उसने इनको बुलाकर गाना सुना और ऐसा मोहित हुआ कि इन्हें दिल्ली ले जाना चाहा। जब ये न गए तो इन्हें कैद करके ले गया। राजा हरीदास तोदर राजपूत† ने सुना तब इन्हें बादशाह से सिफारिश करके छुड़ा दिया। "भक्तमाल"

---

* भक्तमाल में इनको पाटन नगर का राजा लिखा है।

† संभव है कि ये श्रीवल्लभाचार्य जी के प्रपौत्र श्रीव्रजनाथजी के शिष्य हों, जिनका जन्म सं० १६२२ में हुआ था।

में इनके साथ श्रीवल्लभाचार्यजी के वर्णन से जान पड़ता है कि ये श्रीवल्लभाचार्य के संप्रदाय में थे। एक गंग भट्ट या गंगल भट्ट (नं० ३१) निंबार्क संप्रदाय मे भी थे जो कि केशव भट्ट के शिष्य थे और एक प्रसिद्ध कवि गंग अकबर के दरबार में भी थे। डाक्तर ग्रिअर्सन ने इन गंगग्वाल का वर्णन नहीं किया है।

(३६)

विष्णुविचित्र

दोहा ३५ ध्रुवदासजी ने इनको अच्छा कवि लिखा है परंतु मुझे "भक्तमाल" आदि में कहीं पता न लगा। मुझे स्मरण आता है कि मैंने इनकी कुछ कविता भी देखी है।

(३७)

रघुनाथ

दोहा ३६ ध्रुवदास जी के लेख से श्री मदनमोहन जी के सेवक तथा सुकवि जाने जाते हैं, अतः संभव है कि ये चैतन्य संप्रदाय के हों। चैतन्य महाप्रभु के ६४ महंतों मे रघुनाथ-दास गोसाईं को छोड़कर दो रघुनाथ भट्ट हैं। संभव है इनमे से कोई हों। Catalogus Catalogorum में बहुत से रघुनाथ हैं, जिनमें से एक रघुनाथदास रूप गोस्वामी रचित "दानकेलि कौमुदी" के टीकाकार तथा "साराtसारतत्त्व संग्रह" के कर्त्ता लिखे हैं। संभव है कि यह वही हों। एक गोस्वामी रघुनाथ जी श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के पौत्र भी थे।

(३८)

गिरिधर स्वामी

दोहा ३७ ये बड़े कवि थे। इनके भजन वैष्णव मंदिरों मे अब तक गाए जाते हैं। ध्रुवदास जी के लिखने से विदित होता है कि ये श्री वृंदावन में रहते थे। "भक्तमाल" में इन्हे परम उदार और भक्त लिखा है। लिखा है कि एक बेर मालपुरा गाँव मे रास कराया था। वहाँ ऐसे प्रेममग्न हो गए कि अपना सर्वस्व भगवत् भेंट कर दिया। डाक्टर ग्रिअर्सन ने कई एक गिरिधर का वर्णन किया है, परंतु इनका वर्णन नहीं है, केवल कृष्णानंद व्यास के प्रसंग मे इनका नाम मात्र आ गया है।

(३९)

विट्ठल विपुल

दोहा ३८ ये स्वामी हरिदास जी के मामा थे और पहिले पहिल यही उनके शिष्य भी हुए। स्वामीजी के पीछे यही उनकी गद्दी के अधिकारी हुए। ये बड़े सुकवि थे। डाक्टर ग्रिअर्सन लिखते हैं कि ये मधुवन के राजा के दर्बारी थे। रास के बड़े अनुरागी थे। "रास सर्वस्व" में लिखा है कि स्वामी हरिदास जी की मृत्यु पर इन्होंने अपनी आँखों में पट्टी बाँध ली थी, जिसको रास में श्री ठाकुर जी ने अपने हाथ से खोला था। "भक्तमाल" के अनुसार रासलीला में ये ऐसे मग्न हुए कि उसी समय इनका शरीर छूट गया।

(४०)

विहारिनिदास

दोहा ३९–४०– -विट्ठल विपुल जी के पीछे हरिदास स्वामी की गद्दी पर यह बैठे। बहुत बड़े कवि थे और बहुत कविता बनाई है। प्रेम में ऐसे मग्न थे कि गद्दी का काम कुछ नहीं देख सकते थे। तब (मिस्टर ग्राउस के लेखानुसार) प्रबंध करने के लिये कोल से सारस्वत ब्राह्मण जगन्नाथ बुलाकर रखे गए थे। इन्होंने अपने एक पद में बीरबल के मारे जाने का वर्णन किया है, जिससे इनकी मृत्यु का समय इसके पीछे ही विदित होता है। बीरबल सन् १५९० (संवत् १६४७) में मारे गए थे।

(४१)

व्यास जी

दोहा ४१ से ४५ तक ये ओड़छा के रहनेवाले थे। इनके पिता का नाम सुमुखन भक्त था। बड़े पंडित थे। सब स्थान में वाद करते श्री वृंदावन आए। यहाँ गोस्वामी श्री हित हरिवंश जी के दर्शन से ऐसे मोहित हुए कि इनके शिष्य हो गए। "भक्तमाल" की टीका के अनुसार सन् १६१२ मे पैंतालीस वर्ष की अवस्था मे श्री वृदावन आए। व्यास जी के सेव्य ठाकुर श्री युगुलकिशोर जी हैं, जो अब पन्ना राज्य में विराजते हैं। श्री वृंदावन में इनका मदिर १६८४ का बनवाया भग्नावस्था में पड़ा है। इसको नोनकरण नामक

किसी चौहान राजपूत ने बनवाया था। (See Growse's Mathura page 234)। व्यास जी को घर लौटा ले जाने के लिये ओड़छा के राजा तथा इनके घर के लोगों ने जब बड़ा पीछा किया, तब इन्होंने सबके देखते श्री गोविन्ददेव जी के मंदिर का जूठा महाप्रसाद भंगी के हाथ से लेकर खा लिया। सब इनसे निराश होकर चले गए। बड़े सुकवि थे। इनकी कविता से ऐतिहासिक बहुतेरी बातों का पता लगता है। जैसे "मथुरा लुटत कटत वृंदावन", तथा सूरदास जी आदि महात्माओं का समसामयिक होना। रास के ये बड़े प्रेमी थे। लिखा भी है कि "सोई व्यास जो रास करावै"। रास में एक दिन श्री राधिका जी का नूपुर खुल गया, चट आपने अपना जनेऊ तोड़कर बाँध दिया। बेटी के व्याह के निमित्त जो सब पकान्न बने थे सब साधुओं को खिला दिया। श्री हरिवंश जी के पिता व्यास जी और इनके नाम में प्रायः लोगों ने धोखा खाया है, तथाच निंबार्क संप्रदाय के श्री भट्ट जी के शिष्य हरिव्यास जी को और इनको एक करने में भी लोगों ने भ्रम खाया है। व्यास जी की समाधि अब तक श्री वृंदावन में है।

(४२)

नरवाहन

दोहा ४६ ये पहिले ठग थे। भौगाँव में रहते थे। पीछे गोस्वामी हित हरिवंश जी के शिष्य हो गए। "भक्तमाल"

मे भी इनका वर्णन है। राजा नागरीदास जी ने "पद प्रसंग माला" ग्रंथ मे लिखा है कि ये ब्रज के एक जिमींदार थे, डाका मारा करते थे, एक बेर एक साहूकार को लूटा, लाखों का धन पाया, साहूकार को भी बंदी कर रखा, पीछे विदित हुआ कि यह भी हरिवंश जी का शिष्य है तब उसका धन लौटाया और बहुत विनती कर उसे छोड़ दिया। इस गुरुभक्ति पर हरिवंश जी ऐसे प्रसन्न हुए कि दो पद इन्हीं की छाप देकर बनाया और अपनी चौरासी में रख दिया।

(४३)

नाइक

दोहा ४७ ध्रुवदास जी के लेख से यह विदित होता है कि ये और रसिक मुकुंद जो (नं० ४४) घर द्वार छोड़कर श्री वृंदावन आ बसे थे। "भक्तमाल" आदि में कहीं इनका नाम नहीं मिला। डाक्टर ग्रिअर्सन ने सरदार कवि के संग्रह के आधार पर इनका और मुकुंद कवि का नाम लिखा है।

(४४)

रसिक मुकुंद

दोहा ४७ (नाइक जी नं० ४३ का चरित्र देखिए) एक मुकुंद जी (चैतन्य महाप्रभु के) ६४ महंतों में भी लिखे हैं।

(४५)

चतुर्भुजदास

दोहा ४८-४९ ये गोस्वामी श्री विट्ठलनाथ जी के

शिष्य थे। अष्टछाप में थे। श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के शिष्य कुंभनदास जी के सप्तम पुत्र थे। जमनावते ग्राम के रहनेवाले थे। राजा नागरीदास जी तथा "वार्त्ता" के अनुसार इनकी अल्प गौरवा थी; ये पिता पुत्र अत्यंत धनहीन थे। बड़े सुकवि थे। डाक्टर ग्रिअर्सन लिखते हैं कि एक चतुर्भुज मिश्र भाषा दशमस्कंध श्रीमद्भागवत के कर्त्ता थे।

(४६)

वैष्णवदास

दोहा ४८-४९—ये सुकवि थे। ध्रुवदास जी ने इनकी कविता की बहुत प्रशंसा लिखी है। इनकी कविता वल्लभीय मंदिरों में गाई भी जाती है परंतु इनका वर्णन मुझे और कहीं "भक्तमाल" या डाक्टर ग्रिअर्सन के ग्रंथादि में नहीं मिला।

(४७)

परमानंददास

दोहा ५०-५१ इन दोनों दोहों में परमानंद, किशोर (नं० ४८), दोनों संत (नं० ४९), मनोहर (नं० ५०), और खेम (नं० ५१) इतने महात्माओं का वर्णन है। सब लोगों का भजन में प्रवीण होना और सर्वस्व त्यागकर ब्रज में रहना लिखा है।

परमानंद इस ग्रंथ में चार लिखे हैं। "भक्तमाल" में केवल एक अष्टछापवाले परमानंददास का वर्णन मिलता है। एक परमानंदपुरी चैतन्य महाप्रभु के चौसठ महंतों में थे। दूसरे हरिव्यासी संप्रदाय की दूसरी शाखा के कर्णदेव जी के शिष्य परमानंद

देव थे, तीसरे हरिवंश जी के शिष्य परमानंद रसिक थे और चौथे अष्टछापवाले प्रसिद्ध परमानंद दास थे। डाक्टर ग्रिअर्सन ने केवल अष्टछापवाले परमानंद दास का वर्णन किया है।

Catalogus Catalogorum में कई परमानंद का नाम है, जिनमें से निम्नलिखित महात्माओं में से कोई इन चारो मे हो सकते हैं

(१) श्रीधर स्वामी के गुरु परमानंद।

(२) कवि कर्णपूर गोस्वामी का पूर्व नाम। ये चैतन्य सम्प्रदाय के थे। इनके पिता का नाम शिवानंद सेन था। सन् १५२४ (सं० १५८१) मे नदिया प्रांत के कांचनपल्ली ग्राम में जन्म हुआ था।

इनके पुत्र कविचंद्र प्रसिद्ध थे। इनके बनाए इतने ग्रंथ हैं—

अलंकार कौस्तुभ, आनंद वृंदावन चंपू, गौरांग गणोद्देश-दीपिका, चमत्कारचंद्रिका, चैतन्यचंद्रोदय नाटक, वृहत् कृष्णगणोद्देशदीपिका, वर्णप्रकाश।

(३) संस्कृत रत्नमाला के कर्ता परमानंद देव।

एक परमानंद सोनी गोस्वामी श्री विट्ठलनाथ जी के दो सौ बावन शिष्यों मे भी हुए हैं।

(४८)

किशोरजी

दोहा ५०–५१ (परमानंद नं० ४७ देखिए)

"भक्तमाल" मे राठौर राजपूत राजा खेमाल के पौत्र

किशोर जी का वर्णन लिखा है कि अपने दादा के आज्ञानुसार ये स्वयं श्री ठाकुर जी के लिये अपने कंधे पर जल भर लाया करते थे और नूपुर बाँधकर स्वयं श्री ठाकुर जी के आगे नृत्य करते थे। और कहीं इनका पता नहीं चला।

(४९)

दोनों संत

दोहा ५०–५१ (परमानंद नं० ४७ देखिए)।

(१) सतभक्त -भक्तमाल में जोधपुर के रहनेवाले लिखा है। गाँवों से भिक्षा माँगकर साधुओं का सत्कार करते थे।

(२) संतदास "भक्तमाल" में इनको निवाई गाँव के रहनेवाले विमलानंद के प्रबोधन वंश से उत्पन्न लिखा है। बड़े कवि थे। सूरदास जी के समान काव्य करते थे। स्त्री सहित भगवत्सेवा तथा साधु सेवा में रत रहते थे।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने एक संतकवि, एक संतदास और एक संतजीव का नाम लिखा है।

एक संतदास खत्री श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के ८४ शिष्यों में भी थे।

(५०)

मनोहर

दोहा ५०–५१ (परमानंद नं० ४७ देखिए)।

इनका पता और कहीं नहीं लगता। डाक्टर ग्रिअर्सन ने इनका समय सन् १५७७ लिखा है और लिखा है कि ये अकबर के

दर्बारी और ४०० सेना के अधिपति थे। कछवाहा राजा लोनकरण के पुत्र थे। फारसी, संस्कृत और भाषा तीनों में कविता की है। फारसी में इनका तखल्लुस (छाप) तोसनी था।

Catalogus Catalogorum में भी कई मनोहर लिखे हैं। एक राजा मनोहर का भी वर्णन किया है जिनसे सदाशिव ने आश्रय पाया था।

(५१)

खेम या खेम गोसाईं

दोहा ५०–५१ (परमानंद नं० ४७ देखिए)।

"भक्तमाल" में रामदास जी के शिष्य खेम गोशाईं लिखा है। रामचंद्र जी के अनन्य उपासक थे। धनुष बाण का छाप सर्वदा भुजा पर लगाते थे।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने "शिवसिंह सरोज" के आधार पर तीन खेम या छेम कवि का वर्णन किया है। एक ब्रज के रहनेवाले थे। समय लगभग सन् १५७३ के था। इन्होंने नायिका-भेद के ग्रंथ बनाए थे, दूसरे डलमऊ, जिला रायबरेली के (समय सन् १५३०) हुमायूँ के दर्बार में थे, और तीसरे का ठीक पता नहीं, जन्म सन् १६८८ में लिखा है।

(५२)

लालदास स्वामी

दोहा ५२–५३ ध्रुवदास जी के अनुसार ये स्वामी थे। बड़े कवि थे।

"भक्तमाल" में लालदासजी को राजा परीक्षित की भाँति परमभगवद्भक्त लिखा है। वघेरा गाँव में श्रीमद्भागवत की कथा हुई थी। जिस समय वह समाप्त हुई उसी समय शरीर छोड़ दिया।

"भक्तमाल" में एक लालाचार्य, रामानुज स्वामी के भक्त लिखा है।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने लाल कवि कई एक लिखे हैं परंतु उनमें से यह कोई नहीं जान पड़ते।

(५३)

बालकृष्ण

दोहा ५४–५५ ध्रुवदासजी ने लिखा है कि ये बड़े पंडित थे, परंतु गर्व का लेश भी न था और मानसी सेवा सिद्ध थी। "भक्तमाल" में मुझे इनका पता नहीं लगा। डाक्टर ग्रिअर्सन ने जिन कई एक बालकृष्ण का वर्णन किया है उनमें यह नहीं जान पड़ते। इनके पद प्राचीन संग्रहों में पाए जाते हैं और भगवत् मंदिरों में गाए जाते हैं।

Catalogus Catalogorum में भी कई बालकृष्ण लिखे हैं।

एक बालकृष्ण तुलाराम रासधारी श्री हरिवंश जी के शिष्य "रामसर्वस्व" में लिखे हैं।

(५४)

ज्ञानू

दोहा ५६ ध्रुवदास जी ने इन्हें और नाहरमल्ल (नं० ५५) को श्री हित हरिवंश जी का अनन्य शिष्य लिखा है। भक्तमाल में नामदेव जी के गुरु ज्ञानदेव का वर्णन है, परंतु इनका पता कहीं भी नहीं मिला।

(५५)

नाहरमल्ल

दोहा ५६ (ज्ञानू नं० ५४ देखिए)। पूज्य भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र कृत "वैष्णवसर्वस्व" में भी नाहरमल्ल को श्री हित हरिवंश जी के प्रधान शिष्यों में लिखा है और कहीं पता नहीं मिलता।

(५६)

मोहनदास

दोहा ५७ ध्रुवदास जी ने लिखा है कि ये हित हरिवंश जी के ऐसे अनन्य सेवक थे कि उनका गोलोकगमन-समाचार सुनते ही इन्होंने प्राण छोड़ दिया। "वैष्णवसर्वस्व" मे श्री हित हरिवंश जी की शिष्यमंडली में मोहनदास का नाम पाया जाता है।

(५७)

विट्ठलदास

दोहा ५८ ध्रुवदास जी ने, इन्हे, मुरलीधर और गोपालदास के विषय मे एक ही दोहा मे लिखा है कि सर्वदा सेवा में

तत्पर थे और श्रीराधाकृष्ण जी का विहार वर्णन करते थे। "वैष्णवसर्वस्व" में विट्ठलदास जी का नाम श्री हित हरिवंश जी के शिष्यों मे पाया जाता है।

"भक्तमाल" मे विट्ठलदास को माथुर चौबे राना उदयपुर का पुरोहित लिखा है। डाक्टर ग्रिअर्सन ने लिखा है कि इन्हीं के यहाँ साधु समाज हुआ था जिसमें "भक्तमालकार" नाभा जी को गोसाईं की पदवी मिली थी। इनके पुत्र का नाम कान्हरदास था जो अच्छे सुकवि थे।

"दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता" में एक विट्ठलदास कायस्थ बादशाही अहलकार लिखे हैं।

(५८)

मुरलीधर

दोहा ५८—(विट्ठलदास नं० ५७ देखिए)।

(५९)

गोपालदास

दोहा ५८ (विट्ठलदास नं० ५७ देखिए)। "वैष्णव-सर्वस्व" मे इनको हरिव्यास देव की दूसरी शाखा मे भगवान-दास का शिष्य लिखा है।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने केवल एक गोपालदास कवि ब्रज के लिखा है।

"भक्तमाल" में एक गोपाल जी जयपुर के, एक गोपाल काशी के निकट बाबुली गाँव के, और एक गोपालभट्ट श्रीवृंदावन के श्री राधावल्लभ जी (श्री हरिवंश जी के ठाकुर) के सेवक लिखा है। संभवतः यही तीसरे गोपाल भट्ट होंगे। एक गोपाल को कृष्णदास जी पैहारी के शिष्यों में भी गिनाया है।

"चौरासी वैष्णव की वार्ता' में एक गोपालदास बाँस-वाड़े के, एक गोपालदास खत्री ईंटोरा के (ये कवि थे), एक गोपालदास जटाधारी और एक गोपालदास नरोड़ा के लिखे हैं।

"दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता" में एक गोपालदास राजनगर के माइला कोठारी के दामाद अच्छे सुकवि "वल्लभाख्यान" के कर्त्ता, एक गोपालदास कायस्थ सिंहनद के, एक गोपालदास बडनगर के, और एक गोपालदास गुजरात के लिखे हैं।

(६०)

सुंदर

दोहा ५६ ६० ध्रुवदास जी ने लिखा है कि मंदिर की सेवा में ये अहर्निशि निमग्न रहते थे और अपनी सब संपत्ति सेवा में लगा दी थी, अतः भगवान् ने उसे अंगीकार करके अपने सामने इन्हें स्थान दिया।

"भक्तमाल" में इनका नाम मुझे नहीं मिला।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने एक सुंदर ठाकुर तिरहुत के राजा, एक सुंदर कवि भाट असनी के, एक ग्वालियर के प्रसिद्ध कवि-राय सुंदर (जो शाहजहाँ के दर्बारी कवि थे) और एक सुंदर-दास कवि मेवाड़ के दादू जी के शिष्य लिखा है।

एक सुंदर ठक्कुर श्री चैतन्य महाप्रभु के चौदह पार्षदों में भी थे।

"चौरासी वैष्णव की वार्ता" में एक सुंदरदास श्रीजगन्नाथ-पुरी के पास रहनेवाले लिखे हैं।

(६१)

गोसाईंदास

दोहा ६१ ध्रुवदास जी के लेख से ये गौड़ अर्थात् चैतन्य संप्रदाय के वैष्णव थे।

"चौरासी वैष्णवों की वार्ता" में एक गोसाईंदास सार-स्वत का नाम है।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने एक गोसाईं कवि राजपुताने के लिखा है।

(६२)

नागरीदास

दोहा ६२ ६३ ६४ ये नागरीदास जी श्री हित हरिवंश जी के शिष्य थे, कहीं बाहर के रहनेवाले थे, श्रीवृंदावन-वास करते थे। "वैष्णवसर्वस्व" में भी श्री हित हरिवंश जी के शिष्यों में नागरीदास जी का नाम लिखा है। ये कवि भी

थे। राजा नागरीदास जी ने अपने "पदप्रसंगमाला" ग्रंथ में इन नागरीदास को बरसाने के पास रहनेवाले लिखा है और उनकी कविता भी उद्धृत किया है। "रास सर्वस्व" में भी इन्हें सांकरी खोर के रहनेवाले और अच्छे सुकवि लिखा है।

ध्रुवदास जी ने इस ग्रंथ में तीन नागरीदास लिखे हैं। एक यह, दूसरे नागर (नं० ७१), तीसरे नागरीदास (नं० ८३)। शेषोक्त दोनों महात्मा श्रीस्वामी हरिदास जी के शिष्य थे। एक बड़े नागरीदास श्री वल्लभसंप्रदाय में भी हुए हैं जिनका उल्लेख "वारता" और "उत्तरार्द्धभक्तमाल" में है।

(६३)

विहारीदास

दोहा ६५ ध्रुवदास जी ने एक ही दोहे में विहारीदास, दंपति, जुगुल, माधो और परमानंद का नाम लिखा है और सभों के श्री वृंदावन में रहने का उल्लेख किया है।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने व्रज के दो विहारी कवि का नाम लिखा है। एक का जन्म सन् १६१३ और दूसरे का सन् १६८३ है। इनमें से एक तो सुप्रसिद्ध विहारिनिदास जी होंगे और दूसरे संभव है कि ये हों।

(६४)

दंपति

दोहा ६५ (विहारीदास नं० ६३ देखो)।

(६५)

जुगुल

दोहा ६५ (बिहारीदास नं० ६३ देखो)। डाक्टर ग्रिअर्सन ने एक जुगुलदास का नाम लिखा है, परंतु समय नहीं दिया है। इनकी कविता भी "रागसागरोद्भव" मे संगृहीत है।

(६६)

माधो

दोहा ६५· (बिहारीदास नं० ६३ देखो)। "भक्तमाल" मे निम्नलिखित तीन माधो का वर्णन है

१ माधव ग्वाल परमभगवद्भक्त साधुसेवी थे।

२ माधवदास जगन्नाथपुरीवाले -इनका वर्णन आगे होगा।

३ माधवदास कंधागढ़ के ये जब कीर्तन करते थे तो प्रेममग्न होकर लोटने लगते थे। उस देश के राजा ने परीक्षा के लिये एक दिन तिमंजिले कोठे पर वैष्णवों का समाज किया, उसमें इन्हें भी बुलाया। ये कीर्तन करते करते ऐसे प्रेमविह्वल हुए कि लोटते लोटते नीचे आ गिरे, पर किसी अंग में तनिक भी चोट न आई।

ध्रुवदास जी ने चार माधोदास का उल्लेख किया है। एक यह, दूसरे नं० ८५, तीसरे नं० १०४ बरसानेवाले और चैाथे नं० ११२ श्रीजगन्नाथपुरीवाले।

डाक्तर ग्रिअर्सन ने निम्नलिखित दो माधोदास का वर्णन किया है।

१ माधवदास भगवतरसिक जी के पिता।

२ माधवदास दादूजी के शिष्य।

"चौरासी वैष्णव की वार्त्ता" में एक माधोदास वेणीदास, दूसरे माधव भट्ट काश्मीरी, और तीसरे जगन्नाथपुरीवाले माधोदास का वर्णन है।

"दो सौ बावन वैष्णवों की वार्त्ता" में एक माधोदास काबुली, दूसरे माधोदास कायथ सहारनपुरवाले और तीसरे माधोदास कपूर खत्री का वर्णन है।

(६७)

परमानंद

दोहा ६५ (बिहारीदास नं० ६३ और परमानंददास नं० ४७ देखो)।

(६८)

मुकुंद

दोहा ६६-६७ ध्रुवदासजी के लेख से विदित होता है कि ये घरद्वार सब छोड़कर श्रीवृंदावन मे रहते थे। भक्तमाल मे मुझे इनका नाम नही मिला। डाक्तर ग्रिअर्सन ने एक मुकुंद कवि का नाम लिखा है, जिनका समय सन् १६४८ लिखा है। "चौरासी वैष्णवों की वार्त्ता" मे एक मुकुंददास

कायस्थ का चरित्र लिखा है, वह श्रीमद्भागवत की कथा अपूर्व कहते थे। एक मुकुंददास "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता" में भी लिखे हैं। प्रभु मुकुंद की कविता मैंने कीर्तनों में देखी है।

(६९)

चतुरदास

दोहा ६८ ध्रुवदास जी के लेख से विदित होता है कि अंत समय इन्होंने श्रीवृंदावन वास पाया। राजा नागरीदास जी ने अपने "पद प्रसंगमाला" में एक चतुरदास का, जिनका प्रसिद्ध नाम खोजी था, उल्लेख किया है, कि ये मारवाड़ के रहनेवाले रामानुजीय संप्रदाय के वैष्णव थे और सापी में खोजी तथा विष्णुपद में चतुरदास नाम रखते थे। श्रीमद्भागवत की कथा कहते थे इनका एक पद भी उद्धृत किया है। गद्य भक्तमाल में एक स्वामी चतुरदास का वर्णन किया है कि वे अहर्निशि व्रजमंडल में घूमा करते थे सवेरे मंगला आरती श्री वृंदावन में गोविंददेव जी की, श्रृंगार आरती मथुरा में केशवदेव जी की, राजभोग नंदगाँव में करके श्री गोवर्धन होते संध्या को फिर श्री वृंदावन आ जाते। इस ग्रंथ में (भक्तमाल में) खोजी जी का चरित्र अलग ही लिखा है कि इन्होंने अपने गुरु का जो आम के कीड़े हो गए थे उद्धार किया था।

(७०)

चिंतामणि

दोहा ६८—ध्रुवदास जी के लेख से ये कवि जान पड़ते हैं।

भक्तमाल में इनका नाम मुझे नहीं मिला। सुप्रसिद्ध चिंतामणि त्रिपाठी दूसरे थे। ये कोई महाशय व्रज के थे।

(७१)

नागर

दोहा ७० ध्रुवदासजी ने इनका और हरिदास का एक ही दोहे मे वर्णन किया है और दोनों को श्री हरिदास स्वामी का शिष्य लिखा है। (नागरीदास नं० ६२ देखो)।

(७२)

हरिदास

दोहा ७० (नागर नं० ७१ देखो)। हरिदास नाम के अनेक महात्मा हुए हैं। कई एक का वर्णन भक्तमाल मे भी है और कई एक Catalogus Catalogorum मे भी लिखे हैं, परंतु ये उन सभों से भिन्न जान पड़ते हैं। ये श्री स्वामी हरिदास जी के शिष्य थे।

(७३)

नवल

दोहा ७१ नवल और कल्यानी दोनों स्त्री थीं। ध्रुवदासजी के लेख से दोनों ही कवि जान पड़ती हैं। और कहीं मुझे इनका नाम नहीं मिला।

(७४)

कल्यानी

दोहा ७१ (नवल नं० ७३ देखो)।

(७५)

छूंदा अली

दोहा ७२ यह भी स्त्री थीं। इनका नाम भी मुझे और कहीं नहीं मिला।

(७६)

कल्यान

दोहा ७३- ध्रुवदासजी ने लिखा है कि कल्यान जी मंडनि-दास के साथ मे श्री संकेत स्थान (बरसाने के पास) रास की बहुतेरी लीलाओं की रचना करते थे। "राससर्वस्व" मे लिखा है कि श्री नारायण-भट्ट जी संकेत के रहनेवाले रासराय और कल्याणराय दो ब्राह्मणों को बुलाकर उनसे रासलीला की रचना कराते थे। जान पड़ता है कि मंडनिदास का उपनाम ही रासराय हो गया था। भक्तमाल में रूप गोस्वामी के शिष्य कल्यानदास का जो नाम लिखा है मेरे अनुमान मे यह वही महानुभाव हैं।

(७७)

मंडनिदास

दोहा ७३-(कल्यान नं० ७६ देखो)।

(७८)

राधारमन

दोहा ७४ ध्रुवदास जी के लिखने से विदित होता है कि ये सांतन कुंड पर, जो मथुरा से ढाई तीन कोस पर है, रहते

थे। परंतु श्री यमुना स्नान को नित्य आते थे। Catalogus Catalogorum मे गोवर्धनलाल गोस्वामि के पुत्र राधारमण-दास गोस्वामि का नाम मिलता है, परंतु मेरे अनुमान मे यह दोनों एक व्यक्ति नहीं थे।

(७६)

हरिदास

दोहा ७५ ध्रुवदास जी ने इन्हे श्री राधाकुंड के निवासी लिखा है, और कहीं मुझे इनका पता नहीं मिला।

(८०)

गिरिधर सुहृद

दोहा ७६ ध्रुवदास जी के अनुसार ये बरसाने के रहने वाले थे। भक्तमाल में गिरिधर ग्वाल का वर्णन है मेरे अनु-मान में वह और यह एक ही जान पड़ते हैं।

(८१)

नंददास

दोहा ७७, ७८, ७६ नंददास जी महान् कवि हुए हैं, इनकी पंचाध्यायी में वही आनंद आता है जो गीतगोविंद मे। इनके विषय में यह कहावत प्रसिद्ध है कि "और सब गढ़िया नंददास जड़िया"। इनकी गिनती अष्टछाप में है। ये श्री

गोस्वामि विट्ठलनाथ जी के शिष्य थे। इनके विषय में "श्री सौ बावन वैष्णव की वार्ता" में लिखा है कि ये पूर्व देश के रहनेवाले थे, तुलसीदास जी के छोटे भाई थे, सनौढ़िया ब्राह्मण थे, बड़े पंडित थे। एक समय श्री द्वारिका के रणछोड़ जी के दर्शन को लोग इनके गाँव से जा रहे थे। इन्होंने भी अपने जाने का आग्रह किया, तुलसीदास जी ने उन लोगों के साथ इन्हें कर दिया। रास्ते में साथ छूट गया, भटकते हुए ये सिंधनद में पहुँचे। वहा एक रूपवती खत्रानी पर मोहित हो गए, उसके घर का फेरा करने लगे। जब यह बात प्रसिद्ध हो गई तब उस स्त्री के घरवाले लोकनिंदा के भय से नगर छोड़ श्री गोकुल की ओर चले, नंददास भी उसके पीछे हो लिए। गोकुल आकर श्री गोस्वामी विट्ठलनाथ जी के दर्शन और उपदेश से चित्तवृत्ति पलट गई, शिष्य हो गए और वहीं रहने लगे। इन्होंने समग्र श्रीमद्भागवत का भाषानुवाद किया था। परंतु मथुरावासी कथा कहनेवाले व्यासों के इस भय से कि अब मेरी कथा का आदर कौन करेगा, श्री गोसाईं जी के बड़े आग्रह पर केवल रास पंचाध्यायी रखकर शेष ग्रंथ श्री यमुना जी मे डुबा दिया। आहा, जो कहीं वह पूरा ग्रंथ होता तो भाषा में एक अपूर्व पदार्थ होता। नंददास जी की प्रशंसा सुन अकबर ने इन्हें बुलाया, और कुछ गाने को कहा। इन्होंने एक रास का पद सुनाया जिसके अंत में था कि "नंददास ठाढ़ो तहाँ निपट निकट"। अकबर पीछे पड़ गया

कि इस निपट निकट को भेद कहो। नंददास जी ने उसी समय वहीं प्राण त्याग कर दिया।

"भक्तमाल" में इन्हें रामपुरवाले चंद्रहास का पुत्र लिखा है।

डाक्तर ग्रिअर्सन ने इनके बनाए इतने ग्रंथो का नाम लिखा है नाममाला, अनेकार्थ, पंचाध्यायी, रुक्मिणीमंगल, दशमस्कंध, दानलीला और मानलीला। इनके अतिरिक्त स्फुट पद्य बहुत बनाए हैं।

(८२)

सरसदास

दोहा ८० ये श्री हरिदास स्वामी की शिष्यपरंपरा में थे। मिस्टर ग्राउस ने जो इनकी परंपरा दी है उसमें इनको नागरीदास जी (नं० ८३) का शिष्य लिखा है। ये सुकवि थे।

(८३)

नागरीदास

दोहा ८० (नागरीदास नं० ६२ तथा सरसदास नं० ८२ देखो)।

(८४)

परमानंद

दोहा ८१ (परमानंददास नं० ४७ देखो)। ध्रुवदास जी ने इनका और माधो (नं० ८५) का साथ ही वर्णन किया है और दोनों को सुकवि लिखा है।

(८५)

माधो

दोहा ८१ -(परमानंद नं० ८४ और माधो नं० ६६ देखो)।

(८६)

सूरज

दोहा ८२ ध्रुवदास जी के लेख से विदित होता है कि ये और द्विज कल्यान दोनों कोई बड़े पद के मनुष्य थे। परंतु सब बड़ाई छोड़कर श्रीसंकेत स्थान में आकर रहते थे। 'भक्तमाल' में एक प्रसिद्ध सूरदास जी और एक सूरदास मदनमोहन का नाम मिलता है, तथा द्विज कल्यान संकेत स्थान के इसी ग्रंथ में नं० ७६ में वर्णित हो चुके हैं। भक्तमाल में एक कल्यानसिंह और लिखे हैं।

(८७)

द्विज कल्यान

दोहा ८२ -(सूरज नं० ८६ और कल्यान नं० ७६ देखो)। डाक्टर ग्रिअर्सन ने एक कल्यान कवि सन् १६६८ के और दूसरे ब्रज के सन् १५५५ के लिखा है। इनको कृष्णदास पय-अहारी का शिष्य लिखा है।

(८८)

खड्गसेन

दोहा ८३- ये जाति के कायस्थ थे, ग्वालियर के रहने-वाले थे। रासलीला में इनकी बड़ी रुचि थी। एक समय

शरद् पूर्णिमा के दिन रासलीला कराई थी, उसमें एक पद बनाकर गाया, उसको गाते गाते ऐसे प्रेममग्न हुए कि तत्क्षण प्राणत्याग कर दिया। राजा नागरीदास ने "पदप्रसंगमाला" में उस पद को उद्धृत किया है। गद्य भक्तमाल में लिखा है कि इन्होंने बहुत से ग्रंथों से ढूँढ़कर एक ग्रंथ बनाया था जिसमें सब गोपी ग्वालों के मा बाप का नाम सग्रह किया था। डाक्टर ग्रिअर्सन ने इनके बनाए दो ग्रंथ और भी लिखे हैं १ दानलीला, २ दीपमालिका चरित्र। "वैष्णवसर्वस्व" से विदित है कि ये श्री हित हरिवंश जी के संप्रदायभुक्त थे।

(८६)

राघोदास

दोहा ८४- "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता" में लिखा है कि ये सुप्रसिद्ध अष्टछापवाले चत्रभुजदास जी के पुत्र थे। एक दिन गठौली गाँव की ओर से आते थे, वहाँ ब्रजवासियों को फाग खेलते देख एक धमार बनाया और ऐसे प्रेममग्न हुए कि तत्क्षण शरीर छोड़ दिया। राजा नागरीदास जी ने उस धमार को "पद प्रसंगमाला" में उद्धृत किया है और लिखा है कि राघोदास जी इस धमार को पूरा भी न कर पाए थे कि शरीर छूट गया। तब उनकी स्त्री ने पहले उसे पूरा किया, पीछे उनकी अंत्येष्टि क्रिया की। भक्तमाल में दो राघवदास लिखे हैं एक महंत थे और दूसरे अल्ह जी के शिष्य थे।

(९०)

श्रीहरिशरण

दोहा ८५ ८६ इनका पता मुझे कहीं नहीं मिला। ध्रुवदास जी के लेख से विदित होता है कि ये बड़े महानुभाव थे और श्रीवृंदावन वास करते थे।

(९१)

वृंदावन दासी

दोहा ८७ -इनका पता मुझे कहीं नहीं मिला।

(९२)

मीरांबाई

दोहा ८८ ८९ ९० ९१ यह जोधपुर राज्यांतर्गत मेरते के राव रतसेन की बेटी थीं, और परमवीर परम वैष्णव जयमाल की बहिन थीं। इनका विवाह मेवाड़ के सुप्रसिद्ध राणा सांगा (संग्रामसिंह) के कुँवर भोजराज से हुआ था, जो कि कुँवरपने ही में मीरा को विधवा बना गए थे। कर्नल टाड ने राणा कुंभकरण के मंदिर के पास मीराबाई का मंदिर देखकर भ्रम से मीरा जी को राणा कुंभ की स्त्री लिखकर बड़ी गड़बड़ मचा दिया था. परंतु इतिहास से यह बात सर्वथा भ्रम पूर्ण सिद्ध हो गई।

मीराबाई के नैहर का कुल वैष्णव था। मीरा भी बचपन ही से श्री गिरधर लाल ठाकुर के रंग में रँग गई थीं।

जब इनका विवाह हुआ तो इन्होंने श्रीगिरिधर जी को भाँवरी के समय बीच में कर लिया था। ससुरालवाले इनके शाक्त थे, यहाँ इनकी वैष्णवता पर बड़ा विरोध होने लगा। तिस पर मीराबाई के पास सदा साधुसमागम होने से और भी लोक-निंदा होती थी। मीरा जी के पति मर ही चुके थे और राणा साँगा के पीछे राज्य मे महा अराजकता फैल रही थी। मीरा जी के इन आचरणों से दुखी होकर उस समय के राणा ने इन्हे मारने के निमित्त विष तथा सर्प आदि के कई प्रयोग किए, परंतु भगवान् सदा रक्षा करते रहे। इन घटनाओं का प्रमाण मीरा जी के अनेक पदो से पाया जाता है। मीराबाई ससुरालवालों के उत्पीड़न से दुखी होकर श्री वृंदावन चली आईं। यहाँ वह जीव गोसाईं से मिली थीं। कहते हैं कि यहीं इनसे मिलने तानसेन के साथ अकबर भी आए थे। श्री वृंदावन से मीराबाई द्वारिकाजी चली गईं और श्री रणछोड़जी के प्रेम मे मग्न हो गईं। इधर राणा ने राज्य मे अनेक उत्पात होते देख, मीरा का कोप समझ इनको लौटा लाने के लिये ब्राह्मणों को भेजा। ब्राह्मण लोग द्वारिका जी जाकर प्राण देने के लिये धरना दे बैठे। मीराबाई अत्यंत दुखी हुईं और वहीं सबके देखते देखते भगवत्स्वरूप मे लय हो गईं। अब तक रणछोड़जी के साथ मीराबाई की सेवा होती है। इनका ऐतिहासिक चरित्र जोधपुर के मुंशी देवीप्रसाद ने बहुत अच्छा लिखा है। अँगरेज ऐतिहासिकों ने लिखा है कि इनका बनाया

य "राग गोविंद" प्रसिद्ध है, तथा इन्होंने "गीत गोविंद" की
भी टीका की थी, परंतु इन ग्रंथों का कहीं पता नहीं है। हाँ.
इनके बनाए हजारों पद देश भर में प्रसिद्ध हैं।

बाबू अक्षयकुमार दत्त ने "भारतवर्षीय उपासक संप्रदाय"
में इन्हें श्रीमद्वल्लभाचार्य जी की अनुगामिनी लिखा है। परंतु
ऐसा नहीं है। "चौरासी वार्त्ता" में इनके पुरोहित रामदास
का वर्णन है कि श्री महाप्रभु (वल्लभाचार्य) जी से विमुख होने
के कारण इन्होंने पुरोहिताई छोड़ दी। एक पद में रैदास
का नाम आ जाने से कोई कोई रैदास की चेली होने का भी
संदेह करते हैं। जीव गोसाईं के दर्शन को आने से गौड़िया
संप्रदाय की होने का भी संदेह होता है और मारवाड़ की
ओर रामानंदियों के अधिक प्राबल्य से यह भी संभव है
कि यह रामानंदी रही हों।

चित्तौरस्थित इनका मंदिर मूर्तिशून्य रहने के कारण
मुझे शंका हुई कि इनके सेव्य ठाकुर श्री गिरिधर जी कहाँ हैं?
ढूँढ़ते ढूँढ़ते पता लगा कि राज्य जयपुर की प्राचीन राजधानी
आमेर में जो जगतशिरोमणि जी ठाकुर हैं, वही मीरा जी के
सेव्य श्री गिरिधर जी हैं। मैं गतवर्ष स्वयं उनके दर्शन को
गया और वहाँ जाकर पूछने पर पता लगा कि मीरा जी के
ठाकुर गिरिधर जी यही हैं। जब राजा मानसिंह ने चित्तौर
विजय किया था तब इन्हें लाए थे, और जब उनके पुत्र कुँवर
जगतसिंह इनके सामने ही मर गए थे तब इनकी स्थापना

यहाँ पर जगत् शिरोमणि जी नाम रखकर की गई। पहले केवल अकेली भगवान् की द्विभुज मूर्त्ति श्याम प्रस्तर की थी। थोड़े दिन हुए कि धूमधाम से विवाह करके इनके पास श्री स्वामिनी जी की मूर्त्ति भी पधराई गई है। प्रति वर्ष ठाकुर जी गनगौर के उत्सव पर राज्यप्रासाद मे धूम धाम से जाते हैं। मंदिर नौ लाख की लागत से बहुत आलीशान बना है। ढूँढ़ते ढूँढ़ते मुझे एक लेख श्री गरुड़ जी की संगमर्मर की मूर्त्ति की चौकी पर खुदा मिला जो इस प्रकार है

"सं० १६११ फागु सुदी साता भाव संघ का (?) सुत्रधार वोहीथ ईसर की से"।

दूसरा एक लेख उन्हीं गरुड़ जी के चौखट पर बाहर को मिला जो इस प्रकार है

"संवत् १७१६ मि० सावन सुदी ८......दास रो वेटा... दुबे नैण"।

प्रथम लेख से यह अनुमान होता है कि यह लेख मीराबाई के मूर्त्तिस्थापन के समय का है। क्योंकि जिन जगत्सिंह के स्मारक स्वरूप इनका नाम जगत् शिरोमणि हुआ उनका उस समय कहीं पता भी न था, और दूसरा लेख उनके यहाँ (आमेर में) स्थापित होने के समय का विदित होता है।

(६३)

गंगा

दोहा ६२ गंगा और यमुना दोनों ही "वैष्णव सर्वस्व"

के लेखानुसार श्री गोस्वामी हित हरिवंश जी की शिष्य थीं। ध्रुवदास जी के लेख से दोनों ही कवि जान पड़ती हैं।

(६४)

यमुना

दोहा ६२ (गंगा नं० ६३ देखो)।

(६५)

कुंभनदास

दोहा ६३ कुंभनदास जी गोरवा ब्राह्मण थे, श्री गोवर्धन के पास जमुनावते गाँव में रहते थे, श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के शिष्य थे और अष्टछाप में इनकी गिनती थी। इनका चरित्र "चौरासी वार्ता" में लिखा है। इनके सात बेटे थे, जिनमें चत्रभुजदास बड़े कवि थे, अष्टछाप में गिने गए थे; और पौत्र राघवदास जी भी अच्छे कवि थे। ये अत्यन्त ही दरिद्रावस्थापन्न थे। राजा मानसिंह ने इन्हें बहुत कुछ देना चाहा था, परन्तु इन्होंने कुछ भी ग्रहण नहीं किया। एक समय श्री गोशाईं विट्ठलनाथ जी ने चाहा कि इन्हें अपने साथ विदेश लिवा ले जायँ तो कुछ इन्हें प्राप्ति हो जायगी। परंतु एक ही दिन में इन्हें श्रीनाथ जी के बिछुड़ने का ऐसा ताप हुआ कि यह सहन न कर सके। इन्हें गोशाईं जी ने लौटा दिया। एक समय अकबर ने इन्हें फतेहपुर सीकरी में बुलाया था। बड़ा आदर सन्मान करके कहा कि आप कुछ गाइए। तब इन्होंने यह पद गाया था

"भक्तन को कहा सीकरी सों काम।
आवत जात पनहियाँ टूटी बिसर गयो हरिनाम॥
जिनको मुख देखत दुख उपजत तिनको करनी पड़ी सलाम।
कुंभनदास लाल गिरधर बिनु और सबै बेकाम॥"

पंडित मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या ने "श्री गोवर्धननाथ जी की प्राकट्य वार्त्ता" में लिखा है कि जब श्रीवल्लभाचार्य्य महाप्रभु ने श्रीनाथ जी की सेवा पधराई थी तब इन्हें कीर्त-नियाँ नियुक्त किया था।

ये बहुत वृद्ध होकर मरे थे।

(८६)

कृष्णदास

दोहा ८३ ये श्रीवल्लभाचार्य्य महाप्रभु के शिष्य थे, अष्ट-छाप में इनकी भी गणना है। "चौरासी वैष्णवों की वार्त्ता" में इनका चरित्र विशद रूप से लिखा है, उसमे लिखी हुई बहुत सी बातों का उल्लेख भक्तमाल तथा नागरीदास के "पद-प्रसंगमाला" में भी है। वार्त्ता के अनुसार ये जाति के शूद्र थे। श्रीनाथ जी के मंदिर के अधिकारी अर्थात् सर्वप्रधान प्रबंधकर्ता थे। पहिले श्रीनाथ जी की सेवा बंगाली लोग करते थे, परंतु वह सब अन्तःशाक्त थे, उन सभों को कृष्ण-दास जी ने निकाला। सूरदास जी से और इनसे सदा लाग-डाँट रहती थी। जो पद कृष्णदास जी बनाकर सुनाते उसी में सूरदास जी अपनी कविता की छाया दिखला देते। एक

दिन कृष्णदास जी ने एक नवीन भाव का भगवान् के वन से लौटने के समय का पद बड़े परिश्रम से बनाया, परंतु चौथी तुक सारी रात परिश्रम करके भी न बना सके, झपकी लगी तो भगवान् ने तुरन्त उसे लिख दिया। (डाक्टर ग्रिअर्सन ने लिखा है कि श्रीवल्लभाचार्य्य ने लिख दिया)। सवेरे उठते ही उसे देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और सूरदास जी को जा दिखाया। वह भी अक्षर पहिचान गए और बोले भाई तुम्हारी हिमायत बड़े घर से हुई है। एक समय कृष्णदास जी किसी काम से दिल्ली आए थे। वहाँ एक वेश्या का नाच देख मोहित हो गए और जी में आया कि इसका नृत्य श्रीनाथ जी को दिखाना चाहिए। उसे बहुत द्रव्य दे श्री जी द्वार लाए। वह श्रीनाथ जी के सामने नाचती गाती ऐसी प्रेमरस माती हो गई कि उसने वहीं शरीर त्याग दिया। कृष्णदास जी से और गंगाबाई खत्रानी से, जो कविता में अपनी छाप श्रीविट्ठल गिरिधरन रखती थीं, अत्यंत स्नेह था। इस पर श्रीगोस्वामी विट्ठलनाथ जी ने कुछ असंतोष प्रकाश किया। इस पर चिढ़कर कृष्णदास जी ने श्रीगोसाईं जी की श्री जी द्वार में डेवढ़ी बंद कर दी। श्री गोसाईं जी छ महीना तक श्रीगोवर्धन के नीचे परासोली गाँव में रहे, वहीं से अपने विरह की विज्ञप्ति लिखकर फूल की माला में छिपाकर श्रीनाथ जी के पास भेजा करते थे। यह सब विज्ञप्तियाँ अत्यंत हृदयग्राहिणी हैं, बंबई में छप गई हैं। श्रीगोसाईं जी के इस कष्ट का

समाचार जब राजा बीरबल ने सुना, तो ५०० सवार भेज कृष्णदास को कैद कर दिया। श्री गोशाईं जी ने यह सुनते ही अन्न जल छोड़ दिया कि मेरे पिता के शिष्य को यह कष्ट! बीरबल को जब यह समाचार मिला तो उन्होंने कृष्णदास जी को कैद से छोड़ श्री गोशाईं जी के पास भेज दिया। गोशाईं जी इनको आता सुनकर आगे से बढ़कर मिले, कृष्णदास जी चरणों पर गिर पड़े, गोशाईं जी ने फिर इन्हें अधिकार की सेवा सौंपी, कृष्णदास जी कूए मे गिरकर मरे।

डाक्टर ग्रिअर्सन ने भ्रमवश इन्हें कृष्णदास पय-अहारी लिखा है। वह रामानंदी संप्रदाय के थे और उनके शिष्य अग्रदास आदि थे।

"भक्तमाल" मे इनके अतिरिक्त छः कृष्णदास और भी वर्णित हैं जिनमे एक कृष्णदास पय-अहारी और एक "चैतन्य-चरितामृत" (बँगला) के कर्ता कृष्णदास भी हैं।

(८७)

पूरनमल

दोहा ८४ ध्रुवदास जी ने एक ही दोहे में पुरनमल, जसवंत जी, भोपति, गोविंददास और हरिदास का वर्णन किया है और सभो को हरिदास (श्री स्वामी हरिदास) का सेवक लिखा है। इससे ये सब महानुभाव श्री वृंदावन के विदित होते हैं।

"भक्तमाल" में एक पूरनदास का चरित्र है और उनको कवि भी लिखा है।

एक पूरनमल खत्री श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के शिष्य थे जिन्होंने श्रीनाथ जी का मंदिर श्रीगोवर्धन पर बनवाया था।

(९८)

जसवंत जी

दोहा ९४ (पूरनमल नं० ९७ देखो)। "भक्तमाल" में इन्हें राठौर क्षत्री और श्री वृंदावनवासी लिखा है।

(९९)

श्रीपति

दोहा ९४ (पूरनमल नं० ९७ देखो)।

(१००)

गोविंद्दास

दोहा ९४ (पूरनमल नं० ९७ देखो)।

एक गोविंददास नाभा जी के शिष्य थे, पहिले पहिल नाभा जी ने इन्हीं को "भक्तमाल" पढ़ाया था।

(१०१)

हरिदास

दोहा ९४ (पूरनमल नं० ९७ देखो)।

"भक्तमाल" में निम्नलिखित कई हरिदास का चरित्र वर्णित है

१ राजा हरिदास पाटन नगर के, जाति राजपूत।
२—योगानंद जी के वंशज, रामोपासक हरिदास।
३ जाति के बनिए, काशी के रहनेवाले, श्री वृंदा-
वनस्थ श्री गोस्वामि सुंदरलाल के शिष्य।
४ श्री हरिदास स्वामी (नं १०)।

चौरासी और दो सौ बावन वैष्णवों की वार्त्ताओं में भी कई हरिदास का वर्णन है।

(१०२)

परमानंददास

दोहा ६५ ये कनौजिया ब्राह्मण थे, श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य जी के शिष्य थे, अष्टछाप मे इनकी भी गिनती थी। पहिले स्वयं स्वामी थे, लोगो को चेला बनाते थे, पीछे श्री वल्लभाचार्य के दर्शन से उनके शिष्य हो गए। इन्होने बहुत पद बनाए हैं, इसी से इनका नाम श्री गोसाईं जी ने भी सूरदास जी की भाँति परमानंदसागर रखा था। इनके एक पद पर श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य जी ऐसे प्रेममग्न हो गए थे कि कई दिनों तक देहानुसंधान रहित रहे। यह पद "पद प्रसंगमाला" में संगृहीत है। इनका घर कनौज था। वहाँ श्री महाप्रभु जी सूरदासादि अपने शिष्यों के साथ गए थे।

(१०३)

सूरदास

दोहा ६५ भाषाकविकुलमुकुटमाणिक्य श्री सूरदास जी

का नाम कौन नहीं जानता? ये भी श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य जी के शिष्य और अष्टछाप में सर्वप्रधान थे। इनकी जीवन-चरित्र मैं विस्तारपूर्वक "नागरीप्रचारिणी पत्रिका" में लिख चुका हूँ। इसलिये यहाँ फिर से नहीं लिखता। इनके बनाए सवा लाख पद हैं। Catalogus Catalogorum में सूरदास रचित "हरिवंश टीका" का नाम लिखा है।

(१०४)

माधोदास बरसानेवाले

दोहा ८६ ८७ (माधो नं० ६६ देखो)। ध्रुवदास जी ने इन्हें और रामदास (नं० १०५) को एक साथ ही बरसाने के रहनेवाले और सुकवि लिखा है।

(१०५)

रामदास बरसानेवाले

दोहा ८६ ८७ (माधोदास नं० १०४ देखो)।

"भक्तमाल" में दो रामदास का वर्णन है। एक व्रज के रहनेवाले। इन्होंने अपनी लड़की के विवाह की सामग्री साधुओं को खिला दी थी। दूसरे श्री द्वारिका क्षेत्र के रहनेवाले।

"चौरासी वार्ता" में चार रामदास लिखे हैं। एक सारस्वत ब्राह्मण जो साधु सेवा के कारण सदा ऋणग्रस्त रहते थे। दूसरे साचोरा ब्राह्मण द्वारिका जी के रहनेवाले। तीसरे मीराबाई के पुरोहित, और चौथे चौहान राजपूत

श्री गोवर्धन के रहनेवाले, जिनको श्री महाप्रभुजी ने श्रीनाथ जी की सेवा सौंपी थी।

"दो सौ बावन वार्त्ता" मे एक रामदास खमाच के रहनेवाले और दूसरे विरक्त श्रीगोवर्धन के रहनेवाले लिखे हैं। मेरे अनुमान से ये बरसानेवाले रामदास वल्लभीय संप्रदाय के हों तो आश्चर्य नहीं, इनके बनाए पद मंदिरों मे गाए जाते हैं।

(१०६)

सेन

दोहा ८८ ये जाति के नाई थे, रामानंद जी के शिष्य थे, बांधवगढ़ (रीवॉ) के राजा के यहाँ नापितकर्म करते थे। एक दिन साधु-सेवा मे इन्हे देर हो गई तो भगवान स्वयं इनका रूप धर राजा की सेवा कर आए। जब राजा को यह भेद विदित हुआ तब वह इनका शिष्य हो गया। कई पीढी तक राजवंश के लोग सेनवंश के शिष्य होते रहे। सेनपंथ एक मत ही चल गया। इनकी कविता सिक्खों के ग्रंथ साहब मे भी संग्रहीत है।

(१०७)

नामदेव

दोहा ८८ ये जाति के छीपी, रहनेवाले पण्डरपुर (दक्षिण) के थे। ये विष्णुस्वामी के संप्रदाय के आचार्यों में श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के पहिले हुए हैं। इनके गुरु ज्ञानदेव जी थे, और शिष्य त्रिलोचनदेव। इनके नाना प्रसिद्ध भक्त वामदेव

थे। बचपन ही से इन्हे भगवद्भक्ति पर रुचि थी। खेल भी भगवत् संबंधीय ही खेला करते थे। होते होते इनकी ऐसी प्रसिद्धि हुई कि उस समय के बादशाह ने इनको बुलाकर इनकी परीक्षा ली। इनके माहात्म्य की अनेक बातें प्रसिद्ध हैं, मरी गाय का जिलाना, जड़ाऊ पलँग का नदी में से निकालना, श्री-पंढरनाथ जी के मंदिर के द्वार को दक्षिण की ओर घुमा देना, आदि, आदि। एक दिन इनके घर में आग लगी। ये और भी बची बचाई वस्तुएँ लेकर आग में डालने लगे और कहने लगे कि इसे भी अंगीकार कीजिए। इस पर भगवान् ऐसे प्रसन्न हुए कि स्वयं आकर इनका छप्पर छा गए। ये सुकवि थे, इनकी कविता सिक्खों के ग्रंथ साहब में भी संग्रहीत है। राजा नागरीदास जी ने इनके कई पद अपने "पदप्रसंगमाला" ग्रंथ में संग्रह किया है। उनमे से एक का अंतिम पद यह है कि "कहते नामदेव सुनौ कबीर। चरन गहौ येई रघुबीर"। इससे यह विदित होता है कि ये कबीर के समकालीन थे।

(१०८)

पीपा

दोहा ६६ पीपा, धना, रैदास और कबीर का एक ही दोहे में वर्णन किया है। पीपा जी जाति के राजपूत गाग-रौनगढ़ के राजा थे। पहले शाक्त थे, पीछे अपनी छोटी रानी सीता के साथ रामानंद स्वामी के शिष्य होकर राज पाट सब छोड़ दिया। बैरागी और बैरागिनी वेष में रामानंद जी

के साथ द्वारिका जी गए। लौटती समय सीता को कई पठान दस्यु हरण करके ले चले, भगवान् ने स्वयं आकर रक्षा की। निदान ऐसे ही अनेक अद्भुत और अलौकिक उपाख्यान इनके विषय में प्रसिद्ध हैं। ये बड़े उदार थे और सुकवि भी थे। सीता के पातिव्रत्य और साधु-सेवा के भी अनेक उपाख्यान भक्तमाल में लिखे हैं।

(१०६)

धना

दोहा ६८ ये जाति के जाट थे, रामानंद स्वामी के शिष्य थे। इनके विषय मे भी अनेक अलौकिक कथा प्रसिद्ध हैं। इनकी कविता सिक्खों के ग्रंथ साहब में संग्रहीत है।

(११०)

रैदास

दोहा ६८ ये जाति के चमार थे। रामानंद जी के शिष्य थे। काशी के रहनेवाले थे। चमार होकर इनकी भगवद्भक्ति और मान को देखकर ब्राह्मणों और उस समय के राजा ने अनेक उपद्रव किए। परंतु इन्होंने अपनी अलौकिक शक्ति द्वारा सबको परास्त किया और सर्वमान्य हुए। ये अच्छे सुकवि थे, इनकी कविता सिक्खो के ग्रंथसाहब मे संग्रहीत है। इनके कारण चमार ऐसी जाति भी आज तक गौरव के साथ अपना नाम रैदासी बतलाती है। इनके वंश के लोग अभी भी काशी में हैं जो अपनी जूता बनाने की वृत्ति करते हैं।

कबीर

दोहा ८६- कबीर वास्तव में किस जाति के थे और किस कुल में जन्मे थे यह ठीक विदित नहीं। इनके जन्म की कथा यों प्रसिद्ध है कि एक दिन नीमा नाम की एक जुलाहिन अपने पति नूरी के साथ एक विवाहोत्सव में गई थी। मार्ग में लहरतारा नामक झील में, जो काशी के पास ही है, पानी पीने गई। वहाँ एक कमल के पत्ते पर एक सद्यःजात शिशु बहता हुआ पाया। नीमा उसे उठा लाई और बड़े प्रेम से पाला। लहरतारा झील के तट पर अब तक एक छोटी सी मढ़ी उक्त स्थान पर वर्तमान है जो कि कबीरपंथियों में परम पूज्य स्थान माना जाता है। कबीर रामानंद स्वामी के शिष्यों में मुख्य थे। इनके उपदेश से उस समय धर्म संबंधीय घोर विप्लव इस देश में उपस्थित हुआ था, जिसका वर्णन इतिहासों में भी पाया जाता है। इनकी परीक्षा उस समय के दिल्लीश्वर सिकंदर लोदी ने ली थी। कहते हैं कि ये तीन सौ वर्ष तक जीवित रहे थे और मरने के पीछे इनके हिंदू और मुसलमान शिष्यों में जलाने और गाड़ने के लिये घोर झगड़ा हुआ था। इनकी कविता सारे भारतवर्ष में प्रसिद्ध है। इनके बनाए अनेक ग्रंथ हैं। इनका चरित्र इस स्थान पर संक्षेप से लिखना असंभव जानकर आगे के लिये छोड़ते हैं। इनके पुत्र का नाम कमाल था।

(११२)

माधोदास जगन्नाथपुरीवाले

दोहा १०० १०१ भक्तमाल के अनुसार ये कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे, श्री जगदीशपुरी के रहनेवाले थे, परम भगवद्भक्त थे, श्री जगन्नाथ जी स्वयं इनके भोजन को थाल लाए थे, तथा जाड़े में काँपता देखकर दुलाई उढ़ा दी थी, ऐसी ही अनेक वार्ता इनके विषय में अलौकिक प्रसिद्ध हैं। ये वडे सुंदर कवि थे और प्रायः कविता में श्री जगन्नाथ जी का नाम रखते थे, जैसे—

"श्री जगन्नाथराय चिरजीओ सबको भलो मनायो।
धाढ़ी वंश नंद बाबा को माधोदास जस गायो॥"

ये श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के समसामयिक थे। माधवदास जी संस्कृत के भी पंडित थे और बड़े बड़े वादियों को परास्त किया था।

(११३)

विल्वमंगल

दोहा १०२ ये जाति के ब्राह्मण थे, दक्षिण देश में कृष्णा-वेणा नदी के तीर के रहनेवाले थे, चिंतामणि नाम्नी एक वेश्या पर आसक्त थे, पिता के श्राद्ध के दिन प्रेमिका के यहाँ जाने में रात हो गई, वह नदी पार रहती थी, आप नदी में कूद पड़े और एक शव के सहारे पार पहुँचे, वहाँ उसके घर का द्वार बंद पाया, एक सर्प को रस्सी समझ उसके सहारे भीतर पहुँचे। वेश्या ने इनको इस आसक्ति पर धिक्कारा, इस पर

इन्हें ऐसी ग्लानि आई कि घर छोड़ विरक्त होकर निकल पड़े, रास्ते में फिर एक सुंदरी को देखकर मोहित हो गए परंतु फिर जो ज्ञान आया तो सब उपद्रव की जड आँखों को समझकर आँख फोड़ ली। भगवान् ने एक दिन इन्हें कूए से गिरते हुए हाथ पकड़कर बचाया। ये संस्कृत के बड़े पंडित थे। कृष्णकर्णामृत, गोविंदमाधव आदि कई एक संस्कृत के ग्रंथ बनाए हैं। श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु के यही दीक्षा-गुरु थे।

(११४)

रामानंद

दोहा १०३ रामानंद जी, अंगद, सोभू, हरिव्यास और छीतस्वामी का एक दोहे में ध्रुवदास जी ने वर्णन किया है।

"भक्तमाल" के लेख से विदित होता है कि ये दक्षिण देश के रहनेवाले थे और एक सन्यासी के चेले थे। एक दिन रामानुज स्वामी की गद्दी के महंत राघवानंद स्वामी के दर्शन को गए। उन्होंने कहा कि तुम्हारी आयु अब बहुत कम रही है, जो कुछ करना हो कर लो। रामानंद जी राघवानंद जी के चेले हो गए। उन्होंने उनकी मृत्यु के समय उन्हें ब्रह्मांड में प्राण चढ़ाकर समाधिस्थ कर दिया। जब मृत्यु का समय टल गया तब फिर प्राणवायु उतारकर बहुत दिन तक जीने का वरदान दिया। रामानंद जी कुछ दिनों तक गुरु की सेवा करने के उपरांत श्री बदरिकाश्रम यात्रा करके काशी में पंचगंगा घाट पर आकर कुछ दिनों तक रहे। जब लौटकर गुरु के पास

गए तब वहाँ लोगों ने इन्हें पंक्ति में न लिया, क्योंकि ये रामानुजीय कड़े आचार का पालन नहीं कर सके थे। तब गुरु ने आज्ञा दी कि तुम अपना अलग पंथ चलाओ। इसी के अनुसार इन्होंने रामावत या रामानंदी मत चलाया। नाभा जी ने स्वयं लिखा है कि ये बहुत दिनों तक जीवित रहे थे।

"भारतवर्षीय उपासक संप्रदाय" तथा "भक्तमाल" के अनुसार रामानुजाचार्य के शिष्य देवाचार्य, उनके हरिनंद, उनके राघवानंद और उनके रामानंद थे। रामानुजाचार्य का वर्तमान होना संवत् ११५० में माना जाता है और रामानंद जी के शिष्य कबीर जी का वर्तमान होना संवत् १५४५ में सिद्ध है। तथा च यह भी ऊपर लिखा गया है कि इन्होंने बड़ी अवस्था पाई थी। अतः इनका समय विक्रमीय संवत् १४०० से १५०० के भीतर मानना असंगत नहीं जान पड़ता।

"भारतवर्षीय उपासक संप्रदाय" के अनुसार रामानंद जी के १२ प्रधान शिष्यों के यह नाम हैं आशानंद, कबीर, रैदास, पीपा, सुरसुरानंद, सुखानंद, भावानंद, धना, सेन, महानंद, परमानंद और श्रियानंद। परंतु "भक्तमाल" के अनुसार ये १२ शिष्य थे अनंतानंद, कबीर, सुखानंद, सुरसुरानंद, पद्मावत (वा पद्मनाभ), नरहरि, पीपा, भावानंद, रैदास, धना, सेन, और सुरसुरी*। और भी इनके बहुत शिष्य थे। रामानंद जी और उनके शिष्यों ने एक नवीन पद्य प्रचलित

* यह सुरसरी सुरसुरानंद की स्त्री थी।

इनके भाई आत्माराम के शिष्य संतदास और मावोदास की चली। इन शाखाओं का विशेष वर्णन हरिव्यास देव (नं० ११७) के वर्णन में लिखा जायगा।

(११७)

हरिव्यास

दोहा १०२ (रामानंद नं० ११४ देखिए).।

ये निंबार्क संप्रदाय के आचार्य हुए हैं। इनकी गुरु-परम्परा यों है श्री निंबादित्य, श्री निवासाचार्य, विश्वाचार्य, पुरुषोत्तमाचार्य, श्री विलासाचार्य, स्वरूपाचार्य, माधवाचार्य, बलभद्राचार्य, पद्माचार्य, श्यामाचार्य, गोपालाचार्य, कृपाचार्य, देवाचार्य, सुंदर भट्ट, पद्मनाभ भट्ट, उपेंद्र भट्ट, रामचंद्र भट्ट, वामन भट्ट, कृष्ण भट्ट, पद्माकर भट्ट, श्रवण भट्ट*, भूरि भट्ट, माधव भट्ट, श्याम भट्ट, गोपाल भट्ट, बलभद्र भट्ट, गोपीनाथ भट्ट, केशव भट्ट, गंगल भट्ट, केशव काश्मीरि भट्ट, श्री भट्ट और हरिव्यास देव।

हरिव्यास देव से पाँच शाखा चलीं, यथा

प्रथम शाखा शोभूराम, कर्णहरदेव (वा कन्हरदास), मथुरेश, नरहरिदास, प्रह्लाददास।

द्वितीय शाखा कर्णहरिदेव, परमानंददेव, नागजी, मोहन देव, आत्माराम, नारायणदास, भगवानदास, गिरिधारी-दास, गोपालदास।

---

* श्रवण भट्ट का नाम "वैष्णवसर्वस्व" में नहीं है।

तृतीय शाखा शोभूराम, मथुरेश देव, बद्रीश देव, जयरामदेव, कृष्णदेव, धर्मदास।

चतुर्थ शाखा व्यासदेव, परशुराम, हित हरिवंश, हित नारायण, हित वृंदावन, हित गोविंद।

पंचम शाखा (इसके चलानेवाले हरिव्यास जी के पहिले के कोई महात्मा थे)। आशधीर, हरिदास स्वामी, विट्ठल विपुल, बिहारिनिदास, रसिकदेव, पीतांबर देव, गोबर्धन देव, नरोत्तमदेव। रसिकदेव जी के दूसरे शिष्य ललितकिशोरी उनके मौनीदास*।

(यह गुरु-परंपरा "वैष्णवसर्वस्व" के अनुसार लिखी गई है)।

इन हरिव्यासजी के विषय मे प्रायः विद्वानों ने धोखा खाया है। राजा प्रतापसिंह अपनी गद्य "भक्तमाल" की टीका में हरिवंश जी के शिष्य ओड़छेवाले व्यासजी को ही हरिव्यास लिख गए हैं और डाक्तर ग्रिअर्सन ने ओड़छेवाले व्यास जी, और हित हरिवंश जी के पिता व्यास जी और इन हरिव्यास जी तीनों को एक ही माना है। अस्तु।

मूल "भक्तमाल" और प्रियादासी टीका मे इनका चरित्र यों लिखा है कि एक समय ये चरथावल ग्राम के एक बाग मे

* मुझे एक हस्तलिखित प्राचीन पुस्तक में दूसरे ही प्रकार से यह परंपरा मिली है जो लगभग मिस्टर ग्राउस से मिलती है। मिस्टर ग्राउस ने नरहरदेव के पहिले नागरीदास, सरसदास और नवलदास, तीन नाम और लिखे हैं।

किया। "जाति पाँति पूछै नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई" इसे प्रत्यक्ष कर दिखाया। राजपुताने से लेकर इस देश तक इनके मत का बड़ा प्राबल्य था। इतिहासों के देखने से विदित होता है कि उस समय धर्मविषयक घोर विप्लव उपस्थित हुआ था। इनकी प्रधान गद्दी जयपुर राज्यांतर्गत गलता स्थान में है। वह स्थान अत्यंत रम्य है और अब वहाँ बड़े बड़े कई मंदिर वर्तमान हैं, जिनमें श्री सीताराम की मूर्ति विराजमान है।

रामानंद जी स्वयं कवि थे। ग्रंथ तो कोई उपलब्ध नहीं, परंतु स्फुट कविता लोकप्रसिद्ध है। परंतु इनके शिष्यों ने इस देश में भाषा-कविता और वैष्णव धर्म का बहुत कुछ प्रचार किया। मैंने रामानंद कृत एक रामरक्षास्तोत्र भाषा में देखा है। परंतु यह निश्चय नहीं कर सकता कि यह यही रामानंद थे या दूसरे। Catalogus Catalogorum में बहुत से रामानंद और उनके बनाए ग्रंथों के नाम हैं परंतु यह ठीक पता नहीं लगता कि इनका बनाया कौन ग्रंथ है। मेरे अनुमान में रामानंद कृत "रामानंदीय वेदांत" नामक ग्रंथ इनका बनाया हो तो आश्चर्य नहीं।

(११५)

अंगद

दोहा १०३ (रामानंद नं० ११४ देखिए)।

"भक्तमाल" की टीका में लिखा है कि ये रायसेनगढ़ के

राजा सिलहदीन के चाचा थे। एक समय राजा की ओर से शत्रु से लड़ने गए थे। वहाँ उन्हे एक हीरे का ताज मिला जिसमें और हीरों के साथ एक हीरा बहुमूल्य जड़ा था। अंगद जी ने उसे श्री जगन्नाथ जी की भेट की इच्छा से पगड़ी मे रख लिया। राजा ने उसको बहुत चाहा, परंतु उन्होने न दिया। राजा ने विष दिलाया, परंतु वह अमृत हो गया। राजा का ऐसा आग्रह जान अंगद जी उस नगर को छोड़ जगन्नाथपुरी को चले। परंतु मार्ग मे राजा के सिपाहियों ने जा पकड़ा। तब अंगद जी ने श्री जगन्नाथ जी का ध्यान करके उस हीरे को एक तालाब मे फेक दिया। परंतु भगवान् ने ऊपर से ही लोक लिया और अपनी दक्षिण भुजा पर धारण किया। कहते हैं कि अब तक वह हीरा श्री जगन्नाथराय जी के श्री अंग पर है। इनकी कविता नानक जी के "ग्रंथ-साहब" मे संग्रहीत है।

(११६)

सोभू

दोहा १०३ (रामानंद नं० ११४ तथा हरिव्यास नं० ११७ देखिए)।

"भक्तमाल" की टीका मे इन्हे उड़िया देश के रहनेवाले ब्राह्मण लिखा है। कहते हैं कि इनका मंदिर अब तक उड़िया देश में जगाधरी के पास वर्तमान है। ये हरिव्यास देव (नं० ११७) के शिष्य थे। इनसे कई शाखाएँ चलीं। दो शाखाएँ

टिके थे। वहाँ एक देवी का मंदिर था। उसमें किसी ने बकरे का बलिदान दिया था। इन्हें ऐसी ग्लानि हुई कि उस दिन अन्न-जल कुछ न किया। देवी से भगवद्भक्त का यह कष्ट न देखा गया। तुरंत प्रगट हुईं और हरिव्यासजी से क्षमा प्रार्थना कर गुरुमंत्र लिया।

Catalogus Catalogorum में कई हरिव्यास लिखे हैं जिनमें से इनको श्रीभट्ट का शिष्य और परशुराम का गुरु लिखा है। इनका बनाया कोई ग्रंथ नहीं लिखा है। पर एक हरिव्यास मुनि लिखा है और उनकी बनाई श्री निंबादित्य रचित "दशश्लोकी" टीका का उल्लेख किया है। संभवतः यह टीकाकार यही हरिव्यास जी होंगे।

(११८)

छीतस्वामी

दोहा १०३ (रामानंद नं० ११४ देखिए)।

छीतस्वामी श्रीगोस्वामी विट्ठलनाथजी के शिष्य थे। बड़े कवि थे। इनकी गणना अष्टछाप में थी। "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता" तथा राजा नागरीदास के "पदप्रसंग-माला" में इनका चरित्र यों लिखा है कि ये मथुरिया चौबे थे। पहिले बड़े गुंडे थे, लोगों से छेड़छाड़ किया करते थे। श्री गोसाईं जी की प्रशंसा सुन सुन ईर्षावश जल भुन जाते थे, एक दिन तंग करने की इच्छा से एक खोखले नारियल में राख भरकर और एक खोटा रुपया लेकर गोसाईं जी के पास आए

और भेंट किया। गोशाईं जी भेद समझकर बोले कि छीत-स्वामी जी, नारियल फोड़कर गिरी वैष्णवों को बाँट दो। छीत-स्वामी ने जो नारियल फोड़ा तो भीतर उत्तम गिरी निकली। उसी समय श्री गोशाईं जी के शिष्य हो गए। 'वार्ता' में यह भी लिखा है कि ये राजा बीरबल के मथुरिया पंडा थे।

(११९)

राँका

दोहा १०४ "भक्तमाल" में लिखा है कि राँका लकड़िहारा दक्षिण देश के पंढरपुर का निवासी था और बाँका उसकी स्त्री थी। सुप्रसिद्ध नामदेव जी (नं० १०४) के घर के पास रहते थे। दोनों बड़े भगवद्भक्त थे। लकड़ी बेचकर निर्वाह करते थे। परीक्षा के लिये नामदेव जी ने एक दिन मार्ग में एक मोहरों की थैली डाल दी, पर इन्होंने उसे न छूआ, उलटा उसे धूल डालकर ढाँक दिया। नामदेवजी इसी प्रकार से और भी परीक्षा करके इन पर परम प्रसन्न हुए।

(१२०)

बाँका

दोहा १०४ (राँका नं० ११९ देखिए)।

(१२१)

नरसी मेहता

दोहा १०५ १०६ १०७ नरसी मेहता का चरित्र बहुत प्रसिद्ध है। "भक्तमाल" के अनुसार ये गुजरात

रहनेवाले थे। नरसी जी ने अपने एक पद में स्वयं लिखा है कि नागर ब्राह्मण थे। समय इनका ठीक निश्चित नहीं, किंतु सं० १५५० से १६५० के भीतर होना निश्चय है; क्योंकि नरसी जी ने एक पद में कबीर जी और नामदेव जी का नाम लिखा है और इधर नरसी जी का चरित्र नाभा जी ने भक्तमाल में लिखा है; इससे निस्संदेह इतने समय के बीच में ही इनका प्रादुर्भाव हुआ था। "भक्तमाल" की टीका में लिखा है कि नरसी जी जिस कुल में जन्मे थे वह शाक्त था। एक दिन भावज के ताने पर इन्हें दुःख हुआ और घर छोड़ दिया। शिवजी की कृपा से इन्हें भगवद्भक्ति प्राप्त हुई। इन्होंने एक हुंडी द्वारिका में साँवलिया शाह पर की थी कि जिसे स्वयं द्वारिकानाथ ने महाजन का रूप धारण करके सकारा था। इनकी कन्या का ननसारा भगवान् ने स्वयं दिया था। इनके पुत्र का विवाह भगवान् ने स्वयं किया था। नरसी जी जब भगवान् की मूर्त्ति के सामने नाचते गाते थे, तो भगवान् प्रसन्न होकर नित्य एक माला दिया करते थे। यह समाचार सुनकर एक दिन अनायास जूनागढ़ का राव इनके घर चला आया और कहा कि हमें दिखलाओ कि भगवान् कैसे तुम्हें माला दिया करते हैं। यदि तुम आज यह न दिखा सकोगे तो तुम्हारा पाषंडपना निकाल दिया जायगा। नरसी जी भगवान् के सामने गाने लगे और खूब खूब ताने दिए। भगवान ने रीझकर राजा के देखते माला दी। राजा पैरों

पर गिरा। यह पद राजा नागरीदास के "पदप्रसंगमाला" ग्रंथ मे संग्रहीत है।

(१२२)

नारायणदास (नाभाजी)

दोहा १०८ कहते हैं कि ये जाति के डोम थे। भक्तमाल की टीका मे इनको हनुमानवंशीय लिखा है। गद्य भक्तमाल में लिखा है कि तैलंग देश मे गोदावरी के समीप उत्तर रामभद्राचल पर्वत पर रामदास नामक एक ब्राह्मण हनुमान जी के अंशावतार रहते थे; बड़े पंडित थे; उन्हीं के पुत्र नाभा जी थे। "भारतवर्षीय उपासक संप्रदाय" में लिखा है कि भक्तमाल के पूर्व टीकाकारों ने लिखा है कि इनका जन्म हनुमानवंश में हुआ था, परन्तु एक नव्य टीकाकार लिखते हैं कि वैष्णवों की जाति-पाँति वक्तव्य नहीं है। मारवाड़ी भाषा में 'डोम' शब्द का अर्थ हनुमान है, इसी लिये प्राचीन टीकाकारों ने इन्हे हनुमानवंशीय लिखा है। ये जन्मांध थे, बचपन ही मे पिता मर गए। जब यह पाँच वर्ष के थे उस समय इस देश मे घोर अकाल पड़ा था। माता इनका लालन पालन न कर सकी, वन में छोड़कर चली गई। उधर से कील्ह जी अपने शिष्य अग्रदास के साथ आ निकले। उन लोगों को दया आई। इन्हे अपने साथ अपने वासस्थान जयपुर के निकटवर्ती गलता स्थान मे ले आए। उक्त महात्माओं की कृपा से इनकी आँख अच्छी हो गई। वहाँ साधुओं का प्रसाद खाते खाते इनकी

बुद्धि निर्मल हो गई। तब अग्रदासजी की आज्ञा से "भक्तमाल" बनाया।

"भारतवर्षीय उपासक संप्रदाय" के अनुसार इनकी गुरु-परंपरा यों है कि रामानंद जी के शिष्य आशानंद, उनके कृष्णदास पैहारी, उनके कील्ह, उनके अग्रदास और उनके नाभा जी। परंतु नाभा जी ने लिखा है कि रामानंद जी के शिष्य अनंतानंद, उनके कृष्णदास पैहारी, उनके शिष्य कील्ह जी तथा अग्रदास और अग्रदास को अपना गुरु लिखा है।

"भक्तमाल" के बनने का समय कुछ भी लिखा नहीं है, परंतु मेरे अनुमान से यह ग्रंथ संवत् १६४२ के पीछे और संवत् १६८० के पहले बना, क्योंकि संवत् १६४२ में श्री विट्ठलनाथ गोसाईं का परलोक हुआ और उनके पुत्र श्री गिरिधर जी गद्दी बैठे। इन गिरिधर जी के वर्त्तमान रहते "भक्तमाल" बनी, क्योंकि "भक्तमाल" में श्री गिरिधर जी को लिखा है कि "विट्ठलेशनंदन सुभग जग कोऊ नहिं ता समान। श्री वल्लभ जू के वंश में सुरतरु गिरिधर भ्राजमान॥" अतः संवत् १६४२ के पीछे भक्तमाल का बनना निश्चय है। उधर तुलसीदास जी की मृत्यु के पहिले बनना भी जान पड़ता है, क्योंकि तुलसीदास जी के चरित्र में लिखा है कि "रामचरणरस मत्त रहत अहनिसि व्रतधारी"। इसमें वर्त्तमान क्रिया के प्रयोग से प्रतीत होता है कि ग्रंथ रचना के समय तुलसीदास जी वर्त्तमान थे। तुलसीदास जी का मृत्यु-समय संवत् १६८०

है। इसके अतिरिक्त ध्रुवदास जी ने इस "भक्तनामावली" मे "भक्तमाल" का वर्णन किया है और ध्रुवदास जी के ग्रंथ संवत् १६८१ से संवत् १६९८ तक के बने मिले हैं। अतएव इसी समय के लगभग "भक्तनामावली" भी बनी होगी और उसके पहिले "भक्तमाल" बनकर प्रसिद्ध होगया था। "भारत-वर्षीय उपासक संप्रदाय" मे मलूकदासी मत की गुरु-परंपरा इस प्रकार से लिखी है कि रामानंद के आशानंद, उनके कृष्णदास, उनके कील्ह जी और उनके मलूकदास। इससे स्पष्ट है कि मलूकदास और नाभा जी समसामयिक थे। मलूकदास रचित "ज्ञानबोध" ग्रंथ मुझे एक मित्र के पास फारसी अक्षर मे लिखा हुआ खंडित मिला है। उसके अंत मे यह दोहा लिखा है -

"संवत सत्रह सै बरस उनतालीस प्रमान।
माघो कृष्णा चतुर्दशी कियो मलूक पयान * ॥"

"भक्तमाल" मे मलूकदास जी का वर्णन नही है, इससे यह विदित होता है कि "भक्तमाल" वर्नन के समय तक मलूक-दास जी का उदय नहीं हुआ था, नही तो अवश्य उनका वर्णन होता; क्योंकि एक तो ये नाभा जी के एक प्रकार से गुरुभाई थे, दूसरे बड़े महात्मा थे। अतएव संवत् १७०० के कुछ ही पूर्व "भक्तमाल" का बनना प्रतीत होता है।

"भक्तमाल" की हिंदी मे कई एक टीकाएँ बनी हैं, जिनमे से सबसे प्राचीन प्रियादास जी रचित है। प्रियादास जी ने

* यह बयान भी पढ़ा जा सकता है।

संवत् १७६६ में यह टीका बनाई थी। प्रियादास जी ने लिखा है कि इसको मैंने नाभा जी की आज्ञा से बनाया ("वाही समय नाभा जी ने आज्ञा दई लई धारि टीका विस्तारि भक्तमाल की सुनाइए")। अतएव यह टीका सबसे अधिक मान्य है। इसके अतिरिक्त इससे यह भी सिद्ध होता है कि संवत् १७०० के पीछे तक भी नाभा जी वर्तमान थे।

डाक्तर ग्रिअर्सन अनुमान करते हैं कि हितोपदेश और राजनीति के अनुवादक नारायणदास और छंदसार के कर्त्ता नारायणदास तथा नाभा जी तीनों एक ही थे।

(१२३)

ध्रुवदास

ग्रंथकर्त्ता ध्रुवदास जी गोस्वामी हित हरिवंश जी के शिष्य थे। श्री वृंदावन में रहते थे। इनके बनाए निम्नलिखित बहुत छोटे छोटे ग्रंथ उपलब्ध हुए हैं वृंदावनसत, सिंगारसत, रसरत्नावली, नेहमंजरी, रहसिमंजरी, सुखमंजरी, रतिमंजरी, वनविहार, रंगविहार, रसविहार, आनंददशाविनोद, रंगविनोद, निर्तविलास, रंगहुलास, मानरसलीला, रहसिलता, प्रेमलता, प्रेमावली, भजनकुंडली, वावनवृहत्पुराण की भाषा, भजनाभावली, मनसिंगार भजन सत, मनशिक्षा, प्रीति चौवनी, रसमुक्तावली और सभामंडली। इनमें से केवल तीन ग्रंथों के बनने का समय दिया है, अर्थात् सभामंडली संवत् १६८१ में बनी, वृंदावनसत संवत् १६८६ में और रहसिमंजरी संवत्

१६९८ में। इससे यह अनुमान होता है कि इनका समय संवत् १६४० से संवत् १७४० के लगभग होगा। इनके विषय में और कुछ विशेष वृत्तांत नहीं मिलता, केवल "राससर्वस्व" के निम्नलिखित छप्पय से विदित होता है कि ये रासलीला के बड़े अनुरागी थे और करहलाग्राम के रासधारियों के प्रेमी थे

"प्रथम सुमिरि हित* नाम धाम† धामी‡ जु बखाने।
रसिक जनन के हेतु जुगल परिकर§ गुन गाने॥
बरनी लीला रास प्रतछ तासों मति पागी।
पुनि पुनि करि अनुकरन ग्राम ललिता अनुरागी॥
सदा रास रसमत्तहिय सुप्रेम सुधा पूरन करयो।
बलि जाउँ देश कुल धाम की जहँ ध्रुवदास सु अवतरयो॥"

* हित = गोस्वामी हित हरिवंशजी।
† धाम = श्री वृंदावन।
‡ धामी = श्री राधाकृष्ण।
§ जुगल परिकर = भगवद्भक्त।

भक्तों की सूची

संख्या	नाम	दोहों का पृष्ठ	टिप्पणी का पृष्ठ
१	गोस्वामि श्री हित हरिवंश जी	१	१२
२	श्रीशुकदेव जी	२	१३
३	देवर्षि नारद जी	"	"
४	श्री उद्धव जी	"	१४
५	राजर्षि श्री जनक जी	"	"
६	प्रह्लाद जी	"	"
७	सनकादिक	"	"
८	महाकवि जयदेव	"	१५
९	श्रीधर स्वामी	"	"
१०	श्री स्वामी हरिदास जी	"	१६
११	श्री वल्लभाचार्य महाप्रभु	"	१८
१२	गोस्वामि श्री विट्ठलनाथ जी	"	२१
१३	श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु	"	२३
१४	श्री नित्यानंद महाप्रभु	"	२५
१५	श्री रूप गोस्वामी	३	"
१६	श्री सनातन गोस्वामी	"	२८
१७	रघुनंदन	"	२९
१८	सारंग जी	"	"
१९	रघुनाथ जी	"	"

संख्या नाम	दोहों का पृष्ठ	टिप्पणी का पृष्ठ
२० श्रीविलास	३	३०
२१ व्रजनाथ	,,	,,
२२ श्री चद मुकुंद	,,	,,
२३ महापुरुषनंदा	,,	३१
२४ कृष्णदास जगली	,,	,,
२५ प्रवोध वा प्रवोधानंद सरस्वती	,,	,,
२६ श्री गोपाल भट्ट	४	३२
२७ घमंडी	,,	३३
२८ श्री नारायण भट्ट	,,	,,
२९ वर्द्धमान	,,	३४
३० श्रीभट्ट	,,	३५
३१ गंगल	,,	,,
३२ गदाधर भट्ट	,,	३६
३३ नाथ भट्ट	,,	३७
३४ गोविंद स्वामी	,,	,,
३५ गंग अर्थात् गंगग्वाल	,,	३८
३६ विष्णुविचित्र	,,	३९
३७ रघुनाथ	,,	,,
३८ गिरिधर स्वामी	,,	४०
३९ विट्ठल विपुल	,,	,,
४० विहारिनिदास	,,	४१

संख्या नाम	दोहों का पृष्ठ	टिप्पणी का पृष्ठ
४१ व्यास जी	५	४१
४२ नरवाहन	"	४२
४३ नाइक	"	४३
४४ रसिक मुकुंद	"	"
४५ चतुर्भुजदास	"	"
४६ वैष्णवदास	"	४४
४७ परमानंददास	"	"
४८ किशोर जी	"	४५
४९ दोनों संत	"	४६
५० मनोहर	"	"
५१ खेम या खेम गोसाईं	"	४७
५२ लालदास स्वामी	६	"
५३ बालकृष्ण	"	४८
५४ ज्ञानू	"	४९
५५ नाहरमल्ल	"	"
५६ मोहनदास	"	"
५७ विट्ठलदास	"	"
५८ मुरलीवर	"	५०
५९ गोपालदास	"	"
६० सुंदर	"	५१
६१ गोसाईंदास	"	५२

संख्या नाम	दोहों का पृष्ठ	टिप्पणी का पृष्ठ
६२ नागरीदास	६	५२
६३ बिहारीदास	७	५३
६४ दंपति	,,	,,
६५ जुगुल	,,	५४
६६ माधो	,,	,,
६७ परमानंद	,,	५५
६८ मुकुंद	,,	,,
६९ चतुरदास	,,	५६
७० चिंतामणि	,,	,,
७१ नागर	,,	५७
७२ हरिदास	,,	,,
७३ नवल	,,	,,
७४ कल्यानी	,,	,,
७५ वृंदा अली	,,	५८
७६ कल्यान	,,	,,
७७ मंडनिदास	,,	,,
७८ राधारमन	८	,,
७९ हरिहास (हरिदास)	,,	५९
८० गिरिधर सुहृद	,,	,,
८१ नंददास	,,	,,
८२ सरसदास	,,	६१

संख्या नाम	दोहों का पृष्ठ	टिप्पणी का पृष्ठ
८३ नागरीदास	८	६१
८४ परमानंद	,,	,,
८५ माधो	,,	६२
८६ सूरज	,,	,,
८७ द्विज कल्यान	,,	,,
८८ खड्गसेन	,,	,,
८९ राघोदास	,,	६३
९० अहिवरन	९	६४
९१ वृंदावनदासी	,,	,,
९२ मीराबाई	,,	,,
९३ गंगा	,,	६७
९४ यमुना	,,	६८
९५ कुंभनदास	,,	,,
९६ कृष्णदास	,,	६९
९७ पूरनमल	,,	७१
९८ जसवंत जी	,,	७२
९९ मोपति	,,	,,
१०० गोविंददास	,,	,,
१०१ हरीदास	,,	,,
१०२ परमानंददास	,,	७३
१०३ सूरदास	,,	,,

संख्या	नाम	दोहों का पृष्ठ	टिप्पणी का पृष्ठ
१०४	माधोदास बरसानेवाले	१०	७४
१०५	रामदास बरसानेवाले	,,	,,
१०६	सेन	,,	७५
१०७	नामदेव	,,	,,
१०८	पीपा	,,	७६
१०९	धना	,,	७७
११०	रैदास	,,	,,
१११	कवीर	,,	७८
११२	माधोदास जगन्नाथपुरी वाले	,,	७९
११३	बिल्वमंगल	,,	,,
११४	रामानंद	,,	८०
११५	अंगद	,,	८२
११६	सोमू	,,	८३
११७	हरिव्यास	,,	८४
११८	छीतस्वामी	,,	८६
११९	राँका	,,	८७
१२०	बाँका	,,	,,
१२१	नरसी मेहता	,,	,,
१२२	नारायणदास (नाभा जी)	११	८९
१२३	ध्रुवदास	,,	९२